संरक्षक सह सलाहकार

सेठ राम निवास गुप्ता   श्रीमती कविता मल्होत्रा

प्रधान संपादक- कैलाश आदमी

निर्दलीय

अंतरराष्ट्रीय मासिक पत्रिका

- साहित्य
- कला
- संस्कृति
- उद्यमिता

उप संपादक : सरिता गर्ग 'सरि'

प्रवासी संपादक : डॉ. सुनीता शर्मा

वर्ष : २१ | अंक : २ | नई दिल्ली, अगस्त २०२६ | मूल्य : १०/- | विशेषांक : ५०/-

स्वाधीनता और हम विशेषांक

निर्भय होकर करें आज हम
आजादी का ध्वजारोहण।
उन देशद्रोहियों को ललकारें
जो करते हैं नित दोहन ।।

- कैलाश आदमी

(आमुख) पृष्ठ ४-८

अंतरराष्ट्रीय
दिव्य गंगा महोत्सव
एवं साहित्यिक कुंभ-2026
विषय
माँ गंगा : संस्कृति, साहित्य, पर्यावरण और आध्यात्मिक चेतना का संगम
संयोजक
केशव पाण्डेय
राष्ट्रीय समन्वयक
डॉ.शिवेश्वर दत्त पाण्डेय
सम्पर्क नम्बर
9568272638
आमंत्रित अतिथि
त्रिलोकचंद फतेहपुरी
हरियाणा
29-30
अगस्त 2026
संवत 2083
भाद्रपद मास
कृष्ण पक्ष प्रतिपदा
तदनुसार
29 अगस्त 2026
शनिवार
संवत 2083
भाद्रपद मास
कृष्ण पक्ष द्वितीया
तदनुसार
30 अगस्त 2026
रविवार
आयोजन स्थल
अवधूत मण्डल आश्रम
शंकर आश्रम चौक
हरिद्वार (उत्तराखण्ड)
कार्यक्रम की मुख्य विशेषताएं
अंतररष्ट्रीय विचार मंथन / सेमिनार
कवि सम्मेलल / काव्य पाठ
गोषी एवं वाचन
गंगा एवं पर्यावरण संरक्षण पर चर्चा
धार्मिक, आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम
सम्मान समारोह
विज्ञान, शिक्षा, साहित्य, 5 विश्वविद्दालालों के कुलपति
धार्मिक एवं आध्यात्मिक महापुरुष'
साहित्यकार, कवि, शोधकर्ता, पर्यावरणविद
देश-विदेश से विशेष अतिथि
गंगा की पावन धारा, हमारी संस्कृति, हमारा स्वाभिमान
गंगा की सेवा - मानवता की सेवा
आयोजक
दिव्य गंगा सेवा मिशन, हरिद्वार | दि ग्राम टुडे प्रकाशन समूह

अंतरंग

स्तंभ	शीर्षक	लेखक/ कवि/समीक्षक	पृष्ठ
आमुख	आजादी और हमारे कर्तव्य	कैलाश आदमी	४-८
आलेख	लोकतंत्र और साहित्यकार	विनोद कुमार विमल	९-११
--,,--	स्वाधीनता और हम	पूनम श्रीवास्तव	११
--,,--	आजादी का अमृत	विशाल श्रीवास्तव	१२
--,,--	स्वाधीनता और राष्ट्र चेतना	डॉ. सुनीता त्रिपाठी	१३
--,,--	स्वाधीनता और हम	कविता मल्होत्रा	१४-१५
--,,--	सच हुआ अनुभव	मंजूषा रमन धाकरे	१५
--,,--	अहिंसक जन आंदोलन	निलेश देसाई	१६-१७
--,,--	लोकतंत्र पर संकट	कलादास डेहरिया	१७
कविताएं	गांधी, पहाड़ों की पुकार, आजादी	स्मिता जैन, शारदा स्टेफी, विवेक दुबे	१८
आलेख	स्वाधीन भारत में हम	शीला श्रीवास्तव	१९
--,,--	स्वाधीन रहते पराधीन ना हों	डॉ. सीमा अग्रवाल	२०
--,,--	स्वतंत्रता और हम	डॉ. सुनीता शर्मा	२१-२३
--,,--	आजादी और चेतना जाग्रति	सतीशचंद्र 'सतीश'	२४
--,,--	अवश्यंभावी है स्वतंत्र चिंतन	शशिकांत गुप्ते	२५
--,,--	आत्ममंथन का समय	मनोज चतुर्वेदी 'आनंद'	२६-२७
कविता	अधिकार तुम्हारा है	शशि प्रभा शाक्य 'शशि'	२७
आलेख	लोकतंत्र और हम	सूफिया जैदी	२८
--,,--	राष्ट्रीय गौरव और हम	वल्लभ किशोर शर्मा	२९
--,,--	स्वाधीनता और हमारा दायित्व	सरिता गर्ग 'सरि'	३०-३१
कविता	आजादी का संग्राम	रानी सिंगला	३१
आलेख	भारत है तो हम हैं	रति चौबे	३२
कविता	मुक्त करोगे कब ?	अंजू श्रीवास्तव	३२

अंतर्राष्ट्रीय मासिक पत्रिका निर्दलीय

संरक्षक/सलाहकार सुरेन्द्रनाथ दुबे, मेघा पाटकर, डॉ। पवन कुमार जैन, सोहनराज तातेड, सेठ रामनिवास गुप्ता, कविता मल्होत्रा, मधुवाला पांडे

कार्यकारी संपादक – प्रिय अभिषेक (प्रिंस अभिशेख अज्ञानी) ९८२६४२२८२० *प्रबंध सम्पादक– अशोक 'निर्मल'

मूल्य 10 रुपये/ विशेषांक 50/- वार्षिक 600/- पंजीकृत डाक 1000/- शुल्क फोन पे/जी पे 9424443401 QR CODE द्वारा या निर्दलीय (nirdaliya) के SBI मुख्य शाखा भोपाल खाता क्रमांक 30030303507 (IFSC code sbin0001308) अथवा निर्दलीय प्रकाशन के यूनियन बैंक (महाराण प्रताप नगर जोन-2 भोपाल) के खाता क्रं। 10121101000060 में जमा कर सकते हैं।

(RNI regn. DELHI/2006/19211) ईमेल nirdaliyadaily@gmail.com ई पेपर nirdaliya.com

भोपाल कार्यालय/संपर्क: निर्दलीय प्रकाशन-एफ११६/७ शिवाजी नगर, भोपाल ४६२०१६ दूरसंपर्क०७५५ -२७७२४०६

स्वामी,मुद्रक-प्रकाशक-संपादक-कैलाश श्रीवास्तव 'आदमी' (9424443401/8839797448) द्वारा निर्दलीस प्रेस, भोपाल से मुद्रित, राघव भवन सी 6/72 दयालपुर), दिल्ली 110 090 से प्रकाशित।

आजादी और हमारा कर्तव्य बोध

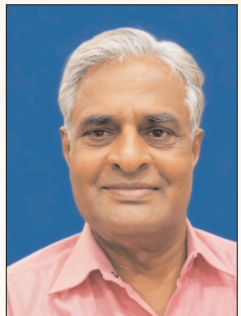

कैलाश आदमी

भारतवासियों को लंबी गुलामी के बाद स्वाधीनता तो मिली लेकिन बंटवारे के कारण लाखों की संख्या में हिंदुओं को शहादत देना पड़ी। जो मुसलमान बंटवारे के पक्ष में नहीं थे और पाकिस्तान से भारत आ रहे थे उन्हें भी मुश्किलों का सामना करना पड़ा और अनेक शहीद भी हुए जिससे स्पष्ट है कि सांप्रदायिक आधार पर हुए बंटवारे के खिलाफ लाखों लोग उठ खड़े हुए थे और जो पक्ष में थे उन्हें भी तमाम विपदाओं का सामना करना पड़ा।

जैसा कि मैं पूर्व में भी यह विचार व्यक्त करता रहा हूं कि धर्म के आधार पर भारत का बंटवारा अंग्रेजों ने षड्यंत्रपूर्वक कराया था और गांधीजी ने तो उसका विरोध करते हुए यहां तक कह दिया था कि बंटवारा उनकी लाश पर ही हो सकता है। इसके बावजूद कांग्रेस ने मोहम्मद अली जिन्ना की जिद स्वीकार की और बंटवारा कबूल कर लिया। जिन्ना की तरह हिंदू महासभा के प्रमुख वीर सावरकर का भी कहना था कि हिंदू मुसलमानों के साथ नहीं रह सकते। इसलिए धर्म, संप्रदाय व जाति के आधार पर भारत का बंटवारा किए जाने की जिद का अंग्रेजों ने भरपूर लाभ उठाया। वे शुरुआत से ही फूट डालो और राज करो वाली नीति पर चल रहे थे।

दरअसल भारत को स्वाधीनता दिए जाने के पीछे ब्रिटिश हुकूमत ने यह शर्त ही लगा दी कि बंटवारा कबूल करने पर ही आजादी दी जाएगी। चूंकि कांग्रेस के नेता शीघ्र आजादी के पक्ष में थे इसलिए उन्होंने अंग्रेजों की शर्त मान ली।

कांग्रेस के नेता यह दावा करते हैं कि भारत को आजादी कांग्रेस के गांधीजी के नेतृत्व में हुए अहिंसक आंदोलन के कारण हासिल हुई जबकि आम नागरिकों का यह मत रहा कि ना केवल अहिंसक आंदोलन बल्कि अन्य क्रांतिकारियों द्वारा छेड़े गए आंदोलन के कारण अंग्रेज भारत को आजादी देने हेतु मजबूर हो गए थे।

यह जाना-माना ऐतिहासिक तथ्य है कि भारत को आजादी दिलाने के लिए १८५७ में ही अंग्रेजों के खिलाफ सेना में बगावत जिसे गदर कहा गया, हो गई था। इसमें हजारों की संख्या में आंदोलनकारी शहीद हुए। इसके बाद अनेक क्रांतिकारी परदे के पीछे काम करते रहे वहीं अनेक क्रांतिकारी खुलकर मैदान में आ गए।

वर्ष १९२५ में ९ अगस्त को काकोरी कांड घटित हुआ जिसमें रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाकउल्ला, राजेंद्र नाथ लाहिड़ी, चंद्रशेखर आजाद, शचिंद्रनाथ बख्शी, मनमथनाथ गुप्त, केशवचंद्र चक्रवर्ती, मुरारी शर्मा और बनवारीलाल श्रीवास्तव ने सहारनपुर से लखनऊ जा रही यात्री गाड़ी को काकोरी स्टेशन पर रोक कर दस हजार रुपए का खजाना लूट लिया था। लुटेरे कहे जाने वाले सभी क्रांतिकारी हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन नामक क्रांतिकारी संगठन के सदस्य थे। उन्होंने पुलिस के हाथ ना आने की शपथ ली थी जिसका उन्होंने अंतिम समय तक पालन किया। इसके परिणामस्वरूप रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाक और लाहिड़ी को दिसंबर १९२७ में फांसी दे दी गई। चंद्रशेखर फरार हो गए थे किंतु २७ फरवरी १९३१ को उन्हें इलाहाबाद के अल्फ्रेड पार्क में पुलिस ने घेर लिया और उन पर गोलियों की बौछार कर दी। मृत्यु पूर्व श्री आजाद ने खुद को ही गोली मार दी और वे शहीद हो गए। अन्य क्रांतिकारियों में केशवचंद और मुरारी शर्मा को पुलिस नहीं पकड़ पाई और वे आजन्म फरारी में ही रहे जबकि बनवारी लाल श्रीवास्तव ने जुर्म कबूल कर लिया और उन्हें पांच वर्ष की कैद हुई जबकि मनमथनाथ गुप्त को १४ वर्ष कैद और शचिंद्रनाथ बख्शी एवं मुकुंदलाल गुप्त को आजीवन कारावास भुगतना पड़ा।

काकोरी कांड में रोशनसिंह को भी पुलिस ने घेर लिया था तथा उन्हें १९ दिसंबर को फांसी दे दी गई जबकि शचिंद्रनाथ सान्याल, योगेशचंद्र चटर्जी और गोविंद चरणकर को आजीवन कारावास भोगना पड़ा, वहीं विष्णु चरण दुबलिश, सुरेशचंद्र भट्टाचार्य, रामकृष्ण खत्री, राजकुमार सिन्हा को दस-दस वर्ष कैद जबकि प्रेमकृष्ण खन्ना, रामदुलारे त्रिवेदी और भूपेंद्रनाथ सान्याल को पांच-पांच वर्ष कैद, रामनाथ पांडे को तीन वर्ष जबकि प्रणवेश कुमार चटर्जी को जुर्म कबूल करने पर पांच वर्ष कैद भुगतना पड़ी। इसके अलावा हरगोविंद और शचिंद्रनाथ विश्वास पर मुकदमा चला लेकिन

उनके विरूद्ध अभियोग सिद्ध नहीं किया जा सका। दामोदर स्वरूप सेठ के विरूद्ध बीमारी के कारण मुकदमा नहीं चलाया गया। काकोरी कांड में १४ अन्य क्रांतिकारी भी गिरफ्तार किए गए थे लेकिन उन्हें गवाहों के अभाव में छोड़ना पड़ा। कुंदनलाल गुप्त फरार होने में सफल रहे।

काकोरी कांड में कुल मिलाकर ४२ क्रांतिकारियों को आरोपी बनाया गया था जिनमें से दो बनारसीलाल और इंद्रभूषण मित्र सरकारी गवाह बन गए थे किंतु शेष सभी ४० क्रांतिकारियों को यातनाएं भुगतना पड़ी। जब चंद्रशेखर आजाद को अदालत में पेश किया गया और न्यायाधीश ने नाम पूछा तो चंद्रशेखर ने कहा- आजाद। पिता का नाम पूछने पर उन्होंने उत्तर दिया- स्वाधीनता और घर पूछने पर चंद्रशेखर ने कहा- जेलखाना। वस्तुतः चंद्रशेखर का पूरा नाम चंद्रशेखर तिवारी था और वे अपने परिवार में भी विद्रोही प्रकृति के रहे थे।

१९२२ में जब एक हिंसक घटना होने पर गांधीजी ने असहयोग आंदोलन रोक दिया था तो हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन ने अंग्रेजों के विरूद्ध अपनी गतिविधियां तेज कर दी और इसी का परिणाम काकोरी कांड के रूप में सामने आया। आजादी का श्रेय मुख्य रूप से महात्मा गांधी और उनके सहयोगियों को दिया जाता है जिन्होंने सत्याग्रह और अहिंसा के बल पर देशवासियों को आजादी दिलाई किंतु अन्य क्रांतिकारियों को कभी भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकेगा। इस हेतु हमारा भी कर्तव्य है कि उनकी कुर्बानी को व्यर्थ न जाने दिया जाए।

क्रांतिकारी भले ही हिंसा का मार्ग अपना रहे हों लेकिन उनका अंतिम और एकमात्र उद्देश्य भारत को विदेशी गुलामी से छुटकारा दिलाना था और क्रांतिकारी इस हेतु जाति व संप्रदाय के आधार पर किए जाने वाले भेदभाव को तिलांजलि दे चुके थे।

क्रांतिकारियों का इतिहास जानने के पूर्व हमें भारत के इतिहास पर सरसरी नजर दौड़ाना होगी। दरअसल भारत में गुलामी की भयावहता का स्वरूप इस्ट इंडिया कंपनी के आने और फिर २ अगस्त १८५८ से ब्रिटिश सरकार द्वारा सत्ता संभालने हेतु भारत का शासन अधिनियम १८५८ पारित होने के बाद शुरू हुआ। वैसे मुगलों ने ११९२ से १७५७ तक भारत की सत्ता हथियाए रखी थी लेकिन अंग्रेजों द्वारा सत्ता संभाले जाने के बाद भारत का जो आर्थिक शोषण हुआ वह कल्पनातीत ही कहा जा सकता है। १७७० से १९४५ के मध्य १७ अकाल पड़े जिनमें साढ़े तीन करोड़ लोगों को जान से हाथ धोना पड़ा जबकि इस बीच दुनिया के कई देशों में युद्ध हुए जिनमें ५० लाख लोग मारे गए थे। रूस में स्टालिन की तानाशाही के दौरान ढाई करोड़, चीन में माओ के कुशासन में साढ़े चार करोड़ जबकि द्वितीय विश्व युद्ध में साढ़े पांच करोड़ लोग मारे गए इससे स्पष्ट है कि कुशासन और युद्धों के दौरान मारे गए लोगों की संख्या बहुत अधिक रही।

मुगलकाल के दौरान मुसलमान भारत की आर्थिक संपदा का शोषण करते थे लेकिन वे इससे प्राप्त राशि का उपयोग भारत में ही करते थे। इसके विपरीत अंग्रेज भारत की संपदा का दोहन कर उससे अपने खजाने चमकाते थे। मुगलों के पूर्व फ्रांस, डच एवं पुर्तगाल के आक्रमणकारी भारत में घुसे और जिन क्षेत्रों में उन्होंने हमले किए वहां के राजा उनका मुकाबला नहीं कर पाए।

ईपू ७१५ में मोहम्मद बिन कासिम के आक्रमण से लेकर वर्ष १०१८ में मोहम्मद गजनवी के आक्रमण तक राजा परस्पर लड़ते रहते थे जिसके परिणाम स्वरूप विदेशियों को भारत भूमि हड़पने में आसानी हुई। वर्ष १०६६ में इंग्लैंड में रॉयल नेवी की नींव डाली गई तो ब्रिटेन के जहाज भारतीय बंदरगाहों पर मंडराने लगे थे। वर्ष १२९० में अलाउद्दीन खिलजी से लेकर १७५७ के मध्य ४६७ साल ऐसे रहे जब मुसलमान शासक भारत के कई क्षेत्रों में काबिज होने में सफल रहे। इस बीच अंग्रेजों ने १५३९ में मद्रास आकर भारत में व्यापारिक संभावनाओं का पता लगा लिया। वर्ष १६१५ में जहांगीर से अनुमति लेकर अंग्रेजों ने सूरत में कारोबार फैलाया।

हैदराबाद में १७२४ में निजामुल्हल्क ने स्वतंत्र निजाम की स्थापना कर ली। उसकी मृत्यु के बाद १७४८ में उसका बेटा नासिर जंग दूसरा निजाम बना तो उसके ममेरे भाई मुजफ्फरजंग ने खुद को निजाम घोषित कर दिया तो अंग्रेजों ने नासिर जंग का पक्ष लिया। फ्रांस ने उसे अमान्य करके चंदा साहेब को नवाब बनवा दिया। इसे लेकर १७४८ से १७६३ तक चार कर्नाटक युद्ध अंग्रेजों और फ्रांसीसीयों के मध्य हुए। फ्रांस की सहायता से हैदराबाद में सलावत जंग निजाम तो अरकाट में अंग्रेजों की मदद से नसरूद्दीन नवाब बना। १७६३ में इंग्लैंड और फ्रांस के बीच पेरिस संधि हुई जिसमें फ्रांस केवल पांडिचेरी तक सिमित रहने हेतु राजी हो गया। उधर अंग्रेज कलकत्ता से रामेश्वरम तक पश्चिमी तट तक फैल गए।

अंग्रेजों ने कुल मिलाकर १८९ साल सत्ता हथियाये रखी। १७५७ में पलासी का युद्ध जीतने के बाद १८५७ तक वे निरंकुशता से सत्ता पर हावी रहे लेकिन १८५७ में मंगल पांडे के नेतृत्व में विद्रोह हुआ तो दूसरी और १८५७ के क्रांतिकारियों की मदद से दिल्ली में बहादुर शाह जफर ने कूटनीति का सहारा लेते हुए अपनी ताकत दिखा दी थी

जिसके कारण अंग्रेजों को अपनी नीतियों में परिवर्तन करना पड़ा।

१८६१और फिर १८९२ में ब्रिटिश सरकार ने इंडियन कांसिल्स एक्ट के जरिए प्रशासन में भारतीयों की भागीदारी बढ़ा दी थी लेकिन वे फूट डालो और राज करो वाली नीतियों पर चलते रहे जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण १९०५ में सामने आया जब उन्होंने बंगाल का विभाजन कर पूर्वी बंगाल और असम प्रांत खड़े कर दिए। यह वही दौर था जब मुसलमान एकजुट हो रहे थे। दिसंबर १९०५ में ब्रिटेन में लिबरल पार्टी सत्ता में आई तो उसने जोन मॉरले को भारत मामलों का सचिव बनाया। उसने २० जुलाई १९०६ को ब्रिटिश संसद में भारतीय विधान परिषदों के विस्तार का कानून पास कराया तो दूसरी ओर मुसलमान सितंबर १९०६ में लखनऊ में सैयद बिलग्रामी और नवाब मोहसिन उल मुल्क सिया और सुन्नी मुसलमानों को अंग्रेजों की कूटनीति के विरूद्ध सचेत कर रहे थे। एक अक्टूबर १९०६ को मुसलमानों का एक शिष्ट मंडल वायसराय लॉर्ड मिंटो से मिलने शिमला पहुंचा जो उन दिनों भारत की ग्रीष्मकालीन राजधानी शिमला में रह रहे थे। आगा खान तृतीय के नेतृत्व में ३० मुस्लिम नेता उनसे मिले तब अलीगढ़ महाविद्यालय के प्राचार्य वाज आर्च होल्ड वहां मौजूद थे।

मुस्लिम नेताओं ने वायसराय से मांग की कि मुसलमानों के लिए पृथक चुनाव प्रणाली अपनाई जाए जो ऐसी हो कि मुसलमान अपने मुसलमान प्रत्याशी को मत देकर उसे मुस्लिम कल्याणकारी कामों में लगा सकें। इसके साथ ही उन्होंने कई मांगें रखीं जिनमें मुस्लिम विश्वविद्यालय की स्थापना की मांग उल्लेखनीय है।

३० दिसंबर १९०६ को ढाका में अखिल भारतीय मोहम्डन शिक्षा सम्मेलन हुआ जो आगे चलकर मुस्लिम लीग के रूप में परिवर्तित हुआ। ढाका सम्मेलन के अध्यक्ष आगा खान थे। आगे चलकर वायसराय ने इंडियन कॉसिल्स एक्ट १९०९ ब्रिटिश संसद में पारित कराया जिसमें पृथक मुस्लिम निर्वाचक मंडल स्थापित किए जाने की व्यवस्था की गई। संबंधित कानून को मॉर्ले मिंटो सुधार के नाम से जाना गया।

वर्ष १९१६ में लखनऊ पेक्ट हुआ जिसमें अंग्रेजों ने मुसलमानों की अधिकांश मांगें मान ली। इसके बाद प्रथम विश्व युद्ध में कांग्रेस और मुस्लिम समाज के प्रतिनिधि अंग्रेजों के समर्थक के रूप में सामने आए। आगे चलकर खिलाफत आंदोलन में कांग्रेस ने बढ़चढ़ कर सहयोग दिया।

ब्रिटिश प्रधानमंत्री मेक्से रोमडोनाल्ड ने १९३२ में दलितों के लिए पृथक चुनाव क्षेत्र बनाए। इससे स्पष्ट है कि अंग्रेज एक तरफ मुसलमानों को खुश करने की कोशिश कर रहे थे तो दूसरी ओर दलितों के लिए सांप्रदायिक पंचाट (कम्युनल अवॉर्ड) देकर हिंदुओं के एक बड़े वर्ग को साधने के साथ ही हिंदुओं को बांट रहे थे। अंबेडकर ने दलितों के लिए पृथक निर्वाचन क्षेत्र तथा उनमें केवल दलित मतदाताओं को रखे जाने का समर्थन किया जिससे गांधीजी को लगा कि दलित आगे चलकर हिंदू धर्म का ही परित्याग कर सकते हैं। अतएव उन्होंने अनशन शुरू कर दिया। अनशन इतना प्रभावकारी सिद्ध हुआ कि अंबेडकर को गांधीजी से समझौता करना पड़ा किंतु उन्होंने दलित और आदिवासी आरक्षण हेतु गांधीजी को सहमत कर लिया।

ब्रिटेन में १२वीं सदी में वहां के उन धनिकों और पादरियों को लॉर्ड्स जैसी उपाधि देना आरंभ किया गया जो सत्ता के प्रति वफादारी दिखाते थे या जिन्हें सलाहकारों में स्थान मिला हुआ था। ब्रिटेन की आज भी स्थिति यह है कि उसके हाउस ऑफ लॉर्ड्स में जो ७९८ सदस्य हैं उनमें ९२ ऐसे हैं जो पुस्तैनी घराने के सदस्य कहे जा सकते हैं।

वर्ष १६०० में ईष्ट इंडिया कंपनी का गठन भारत में व्यापार करने की दृष्टि से हुआ था और वर्षांत में रानी एलिजाबेथ प्रथम की अनुमति से हाउस ऑफ लार्ड्स में २१५ सदस्य थे। इन लॉर्ड्स द्वारा भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी के पांव जमाने हेतु कई तरीके अपनाए। वर्ष १६१३ में बिलियम हॉकिंस ने सूरत में बंदरगाह और मसुलीपट्टन में कारखाना लगाया। कलकत्ता में लॉर्ड क्लाइव ने मीर जाफर से गुप्त संधि की ताकि मुसलमानों में व्यापार को बढ़ावा दिया जा सके। ११ जून १७५७ को लॉर्ड क्वाइव ने मीर जाफर से संधि की ताकि भारत को गुलामी की जंजीरों में जकड़ा जा सके।

यह वर्ष १४९२ की बात है कि पुर्तगाली नाविक वास्कोडीगामा चार जल यानों में १४०० सैनिकों के साथ केरल के कोजिकोड (वर्तमान कोचिन) पहुंचा। उसके बाद यूरोपीय देशों में भारत पहुंचने की होड़ लग गई। पुर्तगाली कोजीकोड से समुद्र के रास्ते गोवा, बंबई होते हुए दीवदमन तक फैल गए तो पूर्वी तट पर फ्रांसीसी पांडिचेरी में घुसे और कर्नाटक तथा बंगाल तक फैल गए। सर थोमस रो ने जहांगीर के दरबार में १६१५ से पांच वर्ष तक रहकर सूरत में निशुल्क व्यापार की अनुमति ली तो दूसरी ओर चंदरगिरी के हिंदू राजा से

अनुमति लेकर मद्रास में धावा बोल दिया। १६५२ में मद्रास में सेंट जॉर्ज किला बनाया जाकर मद्रास प्रेजीडेंसी स्थापित की गई तो १६५० में कलकत्ता प्रेजीडेंसी पहले ही स्थापित की जा चुकी थी। बंबई प्रेजीडेंसी बाद में स्थापित हुई।

इस तरह धीरे-धीरे अंग्रेजों ने ईस्ट इंडिया कंपनी का कारोबार आगे बढ़ाया और १७७१ में दिल्ली तक डेरा जमाने में मराठों का दामन पकड़ा।

१७७३ में वारन हेस्टिज को भारत का पहला गर्वनर जनरल बनाकर भेजा गया और १७८४ में ब्रिटिश संसद ने ईस्ट इंडिया कंपनी को अपने अधीन कर लिया किंतु इस बीच अमेरिका ब्रिटेन के हाथों से निकल चुका था। १७७५ से १७८३ तक अमेरिकियों ने ब्रिटेन के विरूद्ध स्वाधीनता की लड़ाई लड़ी और अंतिम दिनों में फ्रांस ने भी उसका साथ दिया।

रानी विक्टोरिया ने वर्ष १८५७ के गदर से सबक लेकर हिंदुस्तानी कंपनी से सारे अधिकार हस्तगत कर लिए और भारत को गुलामी की दिशा में धकेल दिया।

जुलाई १७१८ में लॉर्ड क्लाइव को ब्रिटेन की ईस्ट इंडिया कंपनी ने कलकत्ता प्रेजीडेंसी का प्रमुख बना दिया था। वह १७६० में त्याग पत्र देकर लंदन वापस चला गया तो हेनरी वनसी टार्ट नया गर्वनर बना। उधर दिल्ली में आलमगीर शासक था।

१७६० में मीर जाफर को गद्दी से हटाकर उसके बेटे मीरान के दामाद मीर काशिम को अंग्रेजों ने नवाब घोषित कर दिया। दिसंबर १७६२ में हेनरी वनसी टॉर्ट से संधि व्यापार की ईस्ट इंडिया कंपनी को छूट दी गई थी। नवाब ने इस कंपनी के साथ भारतीय कंपनियों को भी कर से छूट दी। इससे भारत में अंग्रेजों के प्रति दुराभाव थोड़ा कम हुआ। १७७२ में लॉर्ड वारन हेस्टिज बंगाल का गर्वनर और अगले वर्ष गर्वनर जनरल बनाया जाकर कलकत्ता के अलावा मद्रास व मुंबई प्रजीडेंसीज का गर्वनर जनरल बना दिया गया।

गुलामी की कहानी बताती है कि अंग्रेज हुकमरानों को इतनी दिक्कत मराठों और अन्य हिंदू शासकों से नहीं हुई जितनी सिखों से हुई। अंग्रेज पंजाब को छोड़कर भारत के अन्य कई हिस्सों में बढ़त बनाए जा रहे थे लेकिन मोहम्मद बिन कासिम के समय से ही मुस्लिम शासक हिंदू राजाओं की परस्पर फूट का लाभ उठाते हुए ताकतवर होते रहे। इसका उदाहरण है वर्ष १००० में गजनवी ११९१ में मोहम्मद गौरी, १३९८ में तैमूर लंग फिर १५२५ में बाबर का शासन। १५२६ के पानीपथ में हुए पहले युद्ध में बाबर से सत्ता छीनने वाले इब्राहीम लोधी का पतन हुआ। १६०५ में अकबर की मृत्यु के बाद सलीम उर्फ जहांगीर वर्ष १६२७ तक सत्ता में काबिज रहा फिर शाहजहां ने १६५८ तक सत्ता की बागडोर अपने हाथों में रखी। १७०७ में औरंगजेब का देहांत हो गया इसके पूर्व मराठा भी ताकतवर हो चले थे। मई १६६६ में शिवाजी औरंगजेब से मिलने गए तो उसने छल पूर्वक उन्हें बंदी बना लिया था। बाद में वे अपनी कूटनीति के सहारे उसके चंगुल से बहार आए किंतु १६८० में उनकी मृत्यु के बाद मराठा अपनी ताकत नहीं दिखा सके। बंगाल में १७०७ में मुरसिद कुली खान ढाका से राजधानी हटाकर मुर्सिदाबाद ले आया था। इसी वर्ष औरंगजेब की मृत्यु हो गई।

१७३८-४० में नादिर शाह अपने जुल्म और ज्यादतियों के लिए जाना गया। उसने १७३९ दिल्ली में लूट-खसौट की। १७४८ में अहमद शाह अबदाली ने शासन सूत्र संभाले तथा १७६९ तक सिंध-पंजाब में ७ बार लूटपाट की। इस बीच काबूल में रंजीतसिंह ने उसके बेटे जामतशाह को हरा दिया जिससे उसका दिल टूट गया था। इसी अवधि में सिराजुद्दौला भी लूटपाट के लिए मशहूर हुआ किंतु मीर जाफर के पुत्र मिराज ने उसे मौत के घाट उतार दिया।

१७५७ में ईस्ट इंडिया कंपनी को भारत में कारोबार के लिए उतारा गया। इस अवधि में ब्रिटेन की नजर उपनिवेश बनाने हेतु भारत पर गढ़ी रही क्योंकि अंग्रेजों को लगता था कि भारत में व्यापार करके वे दुनिया के अधिकांश देशों में व्यापार की दृष्टि से पहुंच बना सकते हैं। जैसा कि मैंने पूर्व में बताया कि अंग्रेजों को मराठों और राजपूतों के अलावा मुस्लिम शासकों से उतनी परेशानी महसूस नहीं हुई जितनी सिखों से हुई। सिख का अर्थ है गुरु का सिखाया हुआ अर्थात शिष्य। सिख संप्रदाय के प्रर्वतक गुरु नानक का जन्म १५ अप्रैल १४६९ को भोई तलवंड़ी में हुआ था जिसे आज नानकाना साहिब के नाम से जाना जाता है जो अब पाकिस्तान में है। इस्लाम को शासक के रूप में पंजाब में आए ४०० साल हो चुके थे किंतु मुसिलम शासकों को सर्वाधिक संघर्ष सिखों से करना पड़ा और फिर अंग्रजों ने मुस्लिमों के साथ ही हिंदू शासकों को दबोचा तो फिर उन्हें भी सिखों से लंबी लड़ाई लड़ना पड़ी। इससे स्पष्ट है कि सिख हों या पंजाबी वे ताकत के बल पर नहीं हराए जा सकते थे इसलिए अंग्रेजों ने फूट डालो राज करो कि नीति अपनाई जो सफल रही। वर्तमान शासक भी इसी की नकल कर रहे हैं।

अंग्रेजों की नजर पंजाब पर पहले से ही थी क्योंकि

वे जानते थे कि भारत पर हमले हमेशा हिंदूकुश पर्वत के रास्ते खेवर दर्रा पार करके ही होते हैं। हमलावर अफगानिस्तान या ईरान से होते हुए आते रहे। यह दौर ईपू ७१२ से शुरू हुआ था जब मोहम्मद बिन कासिम ने देवल के सिंधी राजा दाहिर को हराकर मुस्लिम शासन की नींव डाली थी। अंग्रेजों के लिए भारत में उपनिवेश कायम करना व्यापारिक दृष्टि से उचित लगा।

सिख संप्रदाय के प्रर्वतक गुरु नानक थे जिनका जन्म १५ अप्रैल १४६९ को भोई तलवंडी में हुआ जिसे आज नानकाना साहेब के रूप में जाना जाता है जो अब पाकिस्तान में है। इस्लाम को पंजाब में आए करीब ४०० साल हो चुके थे। आरंभ में तुगलकों ने शासन किया फिर सैयद, लोधी और फिर मुगल आए। गुरुनानक ने पहले पूरे भारत का भ्रमण किया और फिर पंजाब में डेरा डाला। उन्होंने सनातन ग्रंथों और संतों की सीख से ९७४ पदों को चुनकर ग्रंथ साहिब की रचना की। गुरुमत में जपूजी यानी नाम जपना और ध्यान के साथ ही जीविका उर्पाजन को कर्तव्य पालन कहा गया। गुरु ग्रंथ साहेब के ९७४ पदों में हरिनाम ८३४४ बार, राम नाम २५३३ बार और अल्लाह शब्द ४६ बार आता है। इसका प्रभाव यह हुआ कि ना केवल हिंदू बल्कि इस्लाम के अनेक अनुयायी भी सिख पंथ में आ गए। जहांगीर और फिर औरंगजेब के समय खालसा पंथ मजबूत हुआ। गुरुनानक के बाद अंगद देव फिर अमरदास, रामदास गुरु बने।

अकबर ने रामदास गुरु को अमृतसर में हरिमंदिर साहिब हेतु जमीन प्रदान की जहां आज स्वर्ण मंदिर बना हुआ है। रामदास के बाद गुरु अर्जुन देव सिख संगत के प्रधान बने किंतु जहांगीर ने उनकी हत्या कर सिखों और मुगलों के बीच दुश्मनी का बीज रोप दिया। वर्ष १६०६ में यह घटना हुई। अकबर के शासनकाल में सर्वधर्म समभाव की नीति अपनाई गई जिससे इस्लाम को बढ़त मिली थी किंतु तीन नवंबर १६०५ को अकबर की मृत्यु के बाद जहांगीर ने कट्टरपंथी नीतियां अपनाई।

पांचवें सिख गुरु अर्जुन देव ने अवश्य समझदारी से काम लिया जिससे सिख संगत फिर जमने लगी। जहांगीर ने गुरु अर्जुन देव को ३० मई १६०६ को मरवा दिया और उनके अनुयायियों को यातनाएं दी। जहांगीर के बाद शाहजहां बादशाह बना तो सिखों से टकराव कम नहीं हुआ। औरंगजेब ने पूरे भारत को दारुल ए इस्लाम में बदलने की कोशिश की।

गुरु हरगोविंद के बाद उनके पोते हर राय गुरु बने जिनकी औरंगजेब के भाई दारा सिकोह से मित्रता थी। शाहजहां की मृत्यु के बाद औरंगजेब ने दारा सिकोह को सताया तो गुरु हर राय ने मदद की किंतु औरंगजेब ने दारा और उसके परिवार को खत्म कर दिया और रामराय को अपनी तरफ मिला लिया। गुरु हर राय के बाद उनके बेटे हरि किशन अगले गुरु नियुक्त किए गए किंतु औरंगजेब ने राम राय को बढ़त दी जबकि सिख जमात हरिकिशन को ही गुरु मानती थी।

गुरु हरिकिशन ने मृत्यु पूर्व अपने दादा के भाई तेग बहादुर को गुरु घोषित किया किंतु उन्हें औरंगजेब ने मरवा दिया। उसके बाद सिख समुदाय दो खेमों में बंट गया। आगे चलकर गुरु गोविंद सिंह ने स्थिति संभाली। १७०७ में औरंगजेब की मृत्यु के बाद अंग्रेजों का काम आसान हो गया किंतु उन्हें सिखों को ठिकाने लगाने में लंबा समय लगा।

आज हम जिस पंजाब को जानते हैं उसका मुगलकाल और ब्रिटिशकाल में विशेष महत्व रहा। पंज यानी पांच, आब यानी पानी। पांच पानी यानी पंजाब तथा पांच पानी नाम व्यास, सतलज, रावी, चनाब और झेलम नदियों से पड़ा। ये नदियां हिमालय से नीचे उतरकर अरब सागर में मिल जाती हैं। अरब सागर में मिलने से पहले वे सिंधु नदी में मिलती हैं और फिर अकेली सिंधु नदी सागर में समा जाती है। ये आजादी के पहले का अविभाजित पंजाब था। दो आब और पंजाब नाम अकबर के जमीन नापजोख मंत्री टोडरमल ने दिए थे।

जहांगीर ने जब अर्जुनदेव को शहीद किया तब उनके पुत्र हरगोविंद की उम्र मात्र ११ वर्ष थी किंतु वही अगले सिख गुरु बने। अकबर एकमात्र ऐसा मुस्लिम शासक हुआ जिसने इस्लाम की कट्टरता को नामंजूर करते हुए सर्वधर्म समभाव की नीति अख्तियार की और इसी नीति व राजनीति के सिद्धांतों पर चलकर देश को एकता के सूत्र में बांधने के प्रयास किए थे किंतु जहांगीर के बाद शाहजहां बादशाह बना तो उसने सिखों से सीधी टक्कर ली। फिर औरंगजेब ने पूरे भारत को दारूल ए इस्लाम में बदलने की कोशिश की किंतु सिखों के गुरुओं ने ऐसा माहौल बनाया जिससे हिंदू और सिख एकजुटता की बुनियाद पड़ी और अंग्रेजों को भारत छोड़कर मजबूर करने वाली ताकतों में अव्वल स्थान पाया। आज जब हम आजादी की ८०वीं सालगिरह मना रहे हैं तब भी देशद्रोही ताकतें कट्टरपंथी धर्मों की आड़ में कार्यरत हैं।

अंत में मेरी दो काव्य पंक्तियां-

निर्भय होकर करें आज हम आजादी का ध्वजारोहण।
उन देशद्रोहियों को ललकारें जो करते हैं नित दोहन ।।

भारतीय लोकतंत्र के निर्माण, विकास और इसकी रक्षा में साहित्यकारों की भूमिका

विनोद कुमार 'विमल'

लेखनी प्रत्येक काल में समाज का मार्गदर्शन करती आई है । जब -जब समाज दिग्भ्रमित होता है , राजनीति पथ भ्रष्ट होती है, और जनसाधारण किंकर्तव्यविमूढ़ की अवस्था में आता है, तब- तब लेखनी के सिपाही उठकर लेखनी के माध्यम से इन सब का मार्गदर्शन करते हैं । भारत का स्वतंत्रता आंदोलन भी इसका अपवाद नहीं है । पराधीनता के उस काल में जब सर्वत्र पराभव ही पराभव दिखाई देता था , तब भारत में अनेक ऐसे क्रांतिकारी और साहित्यकार उत्पन्न हुए, जिन्होंने अपनी पवित्र लेखनी के माध्यम से भारतीय समाज का मनोबल और आत्मबल बनाए रखने का प्रशंसनीय कार्य किया । स्वतंत्रता आन्दोलन के इस महायज्ञ में साहित्यकारों ने तत्कालीन समाज में चेतना के ऐसे बीज बोये, जिनके अंकुरों की सुवास से सुवासित वृक्षों ने उस झंझावात को जन्म दिया, जिसने समाज के हर वर्ग को इस आंदोलन में ला खड़ा किया ।

लोकतंत्र केवल एक राजनीतिक व्यवस्था नहीं है; बल्कि यह स्वतंत्रता, बंधुत्व और न्याय के मूल्यों पर आधारित जीवन जीने का एक तरीका है। भारत जैसे विशाल विविधता वाले देश में, लोकतंत्र की जड़ें तभी मजबूत हो सकती हैं जब नागरिकों की आवाज़ मुखर बनी रहे । भारतीय लोकतंत्र की यात्रा के दौरान, साहित्यकारों ने लगातार लोगों की आवाज़ और समाज के सजग प्रहरी के रूप में अपनी भूमिका निभाई है । उन्होंने अपनी कलम से न केवल लोकतान्त्रिक मूल्यों को सींचा है, बल्कि जब भी लोकतन्त्र पर संकट आया, वे एक सजग प्रहरी की तरह खडे रहे।

स्वतंत्रता से पहले ही भारतेंदु हरिश्चंद्र, मैथिलीशरण गुप्त,प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, सुभद्रा कुमारी चौहान और माखनलाल चतुर्वेदी जैसे साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं से लोगों में राष्ट्रवाद और लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति अलख जगाई। साहित्य ने आम जनता को उनके अधिकारों और शोषण के खिलाफ आवाज उठाने के लिए प्रेरित किया, जो लोकतंत्र की पहली सीढ़ी बनी।

भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अपने नाटकों भारत दुर्दशा और अंधेर नगरी के ज़रिए ब्रिटिश शासन की शोषणकारी नीतियों को उजागर किया । मैथिलीशरण गुप्त की रचना भारत-भारती आज़ादी की लड़ाई लड़ने वाले क्रांतिकारियों के लिए गीता के समान थी। प्रेमचंद ने अपनी कहानियों और उपन्यासों, जैसे गोदान , कर्मभूमि और रंगभूमि के माध्यम से ब्रिटिश व्यवस्था और किसानों तथा ग्रामीण भारत के शोषण के ख़िलाफ़ ज़ोरदार आवाज़ उठाई । उनकी कहानियों का संग्रह, सोज़-ए-वतन, इतना क्रांतिकारी था कि ब्रिटिश सरकार ने उस पर प्रतिबंध लगा दिया और उसे जलवा दिया । अपने नाटकों चंद्रगुप्त और स्कंदगुप्त के माध्यम से, जयशंकर प्रसाद ने नागरिकों के सामने भारत के गौरवशाली इतिहास को उजागर किया, जिससे उनमें हीन भावना दूर हुई और आत्म-सम्मान की भावना जागी । सुभद्रा कुमारी चौहान ने अपनी कविता झांसी की रानी के माध्यम से भारतीय महिलाओं को स्वतंत्रता संग्राम में शामिल होने के लिए प्रेरित किया । रामधारी सिंह दिनकर ने अपनी कृतियों रेणुका और हुंकार के माध्यम से ब्रिटिश शासन के विरुद्ध भयंकर आक्रोश व्यक्त किया । इसी प्रकार स्वतंत्रता-पूर्व माखनलाल चतुर्वेदी का योगदान कलम और कर्म दोनों के स्तर पर अटूट था, जिसने भारतीय जनमानस को आजादी के महासंग्राम के लिए मानसिक और शारीरिक रूप से तैयार किया ।

भारत की आज़ादी (१९४७) के बाद, देश के पुनर्निर्माण, सामाजिक बदलाव और बौद्धिक चेतना में लेखकों का योगदान बहुत ही महत्वपूर्ण और दूरगामी रहा है। आज़ादी के बाद के दौर में, लेखकों ने न केवल देश की राजनीतिक आज़ादी का जश्न मनाया, बल्कि समाज के सामने मौजूद आंतरिक चुनौतियों को भी निडरता से उजागर किया।

आज़ादी मिलने के तुरंत बाद, भारत को बंटवारे की भारी त्रासदी का सामना करना पड़ा। इस दौरान, लेखकों ने समाज में सांप्रदायिक सद्भाव और एकता बनाए रखने में अहम भूमिका निभाई। यशपाल की झूठा सच, भीष्म साहनी की तमस और खुशवंत सिंह की ट्रेन टू पाकिस्तान

जैसी रचनाओं ने बंटवारे की त्रासदी, सांप्रदायिक हिंसा की कड़वी सच्चाई और मानवीय संवेदनाओं को उजागर किया। मैथिलीशरण गुप्त, रामधारी सिंह दिनकर और सुमित्रानंदन पंत जैसे कवियों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से नव-जागृत राष्ट्र में गर्व और एकता की भावना जगाने का काम किया।

आज़ादी के कुछ ही सालों के भीतर, आम जनता में राजनीतिक व्यवस्था और नेताओं के प्रति निराशा की भावना पैदा होने लगी। लेखक रूमानी और काल्पनिक दुनिया से बाहर निकलकर समाज की कठोर वास्तविकताओं को दिखाने लगे। नागार्जुन, रघुवीर सहाय और श्रीलाल शुक्ल (उपन्यास: राग दरबारी) ने भ्रष्ट राजनीतिक व्यवस्था, नौकरशाही और आम नागरिकों के संघर्षों पर व्यंग्यपूर्वक चित्रण किया है।हिंदी साहित्य में नई कविता और नई कहानी आंदोलन उभरे, जिनमें आधुनिक मनुष्य के अकेलेपन, शहरी जीवन के दबाव और अस्तित्व के संकट को दिखाया गया। अज्ञेय, मुक्तिबोध और मोहन राकेश इन आंदोलनों के अगुआ थे।

आज़ादी के बाद, समाज के दबे-कुचले, गरीब और हाशिए पर रहने वाले वर्गों की आवाज़ साहित्य के केंद्र में आ गई। फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यास मैला आँचल ने (एक आंचलिक उपन्यास के रूप में) ग्रामीण भारत के पिछड़ेपन, जातिगत राजनीति और दबे-कुचले लोगों के जीवन का यथार्थवादी चित्रण किया।इसी माहौल में दलित साहित्य आंदोलन ने ज़ोर पकड़ा। ओमप्रकाश वाल्मीकि (जो जूठन के लेखक हैं) जैसे लेखकों ने समाज में फैले जाति-आधारित भेदभाव और अपमान का जीवंत चित्रण करते हुए सामाजिक न्याय की मांग की।महिला साहित्यकारों ने पुरुष-प्रधान समाज की कड़ी आलोचना की और महिलाओं की आंतरिक भावनाओं, आज़ादी और अधिकारों के समर्थन में अपनी कलम का सशक्त इस्तेमाल किया।कृष्णा सोबती (मित्रो मरजानी), महाश्वेता देवी, अमृता प्रीतम और मन्नू भंडारी (आपका बंटी) जैसी लेखिकाओं ने पारंपरिक पारिवारिक ढांचे के भीतर महिलाओं के शोषण और उनके आत्म-सम्मान से जुड़े मुद्दों को ज़ोरदार ढंग से उठाया। आज़ादी के बाद ही हिंदी और विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं (जैसे बंगाली, मराठी, तमिल, कन्नड़, नेपाली आदि) के साहित्य को राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान मिली।

तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी द्वारा १९७५ से १९७७ के बीच भारत में लगाए गए २१ महीने के आपातकाल और उस दौरान भारतीय लेखकों की भूमिका, भारतीय इतिहास और साहित्य का एक महत्वपूर्ण अध्याय है । इस दौरान नागरिकों के अधिकार निलंबित कर दिए गए, प्रेस पर कड़ी सेंसरशिप लागू की गई और विपक्षी नेताओं को जेल में डाल दिया गया । कई लेखकों और कवियों ने अभिव्यक्ति की आज़ादी पर लगी रोक का ज़ोरदार विरोध किया ।

सेंसरशिप के बावजूद, उन्होंने गुप्त गतिविधियों या प्रतीकों का इस्तेमाल करके सरकार का विरोध किया । प्रसिद्ध आंचलिक उपन्यासकार फणीश्वरनाथ रेणु ने इमरजेंसी के विरोध में सरकार से मिला पद्म श्री सम्मान लौटा दिया । जन-कवि नागार्जुन ने इमरजेंसी का ज़ोरदार विरोध किया और उन्हें जेल भी जाना पड़ा । उन्होंने इंदिरा गांधी पर निशाना साधते हुए मशहूर और तीखे व्यंग्य वाली कविताएँ लिखीं, जैसे इंदु जी, इंदु जी, क्या हुआ आपको...।

दुष्यन्त कुमार ने अपनी प्रसिद्ध ग़ज़लों के माध्यम से आपातकाल के दौर के व्यापक भय और राजनीतिक दमन का विरोध किया । उनकी कृति साये में धूप की ग़ज़लें जैसे कि हो गई है पीर पर्वत-सी, पिघलनी चाहिए प्रतिरोध की आवाज बन गईं । अपने मशहूर उपन्यास कतरा-ए-आरज़ू में राही मासूम रज़ा ने आम लोगों की ज़िंदगी पर इमरजेंसी के दमनकारी असर को बहुत मार्मिक ढंग से दिखाया है । इसी तरह, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना और रघुवीर सहाय जैसे कवियों ने दिनमान पत्रिका और अपनी कविताओं के ज़रिए लोकतंत्र के समर्थन में और सेंसरशिप के ख़िलाफ़ लगातार आवाज़ उठाई ।

मौजूदा भारतीय लोकतांत्रिक परिवेश में साहित्यकारों की भूमिका बेहद अहम और बहुआयामी है । आज का भारतीय समाज तेज़ी से हो रही तकनीकी तरक्की, सांस्कृतिक बदलावों और वैचारिक टकरावों के दौर से गुज़र रहा है । ऐसे में, साहित्यकार न केवल साहित्यिक रचनाओं का रचयिता होता है, बल्कि समाज का मार्गदर्शक भी होता है । साहित्यकार विभिन्न साहित्यिक विधाओं के ज़रिए समाज में व्याप्त विकृतियों, विसंगतियों, भ्रष्टाचार और असमानता

के विभिन्न रूपों को उजागर करते रहे हैं । इसके अलावा, वे इन विधाओं के ज़रिए न केवल मौजूदा समस्याओं को उजागर कर रहे हैं, बल्कि समाज को मानवीय मूल्यों और मानदंडों की रक्षा करने का सही रास्ता भी दिखा रहे हैं । भारत एक बहु-जातीय और बहु-सांस्कृतिक देश है, इसलिए साहित्यकार अपनी रचनाओं के ज़रिए अलग - अलग जातियों, धर्मों और भाषाओं के लोगों को जोड़ने का काम करते हैं । वे समाज में बढ़ती असहिष्णुता और नफ़रत का मुक़ाबला करने के लिए प्यार, करुणा और भाईचारे का संदेश भी देते हैं । हिंदी साहित्य के अलावा, अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्यकार भी दलितों, मूल निवासियों, बुज़ुर्गों, महिलाओं, बच्चों, ट्रांसजेंडर समुदाय, किसानों और हाशिए पर रहने वाले समूहों के मुद्दों को प्रमुखता से उठा रहे हैं।

अंत में, यह कहा जा सकता है कि भारतीय लोकतंत्र की स्थापना, विकास और संरक्षण में साहित्यकारों का योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण और दूरगामी रहा है । लेखकों ने न केवल समाज के लिए एक दर्पण का काम किया है, बल्कि वे ऐसे संरक्षक भी रहे हैं जिन्होंने राजनीतिक चेतना जगाई है और लोकतांत्रिक मूल्यों व सिद्धांतों को बनाए रखा है । साहित्यकारों ने भारतीय लोकतंत्र को केवल एक राजनीतिक व्यवस्था तक सीमित नहीं रहने दिया; उन्होंने इसे एक जीवंत सामाजिक संस्कृति में बदल दिया । उन्होंने सत्ता को नागरिकों के प्रति जवाबदेह बनाने और जनता के शासन की सच्ची भावना को बनाए रखने के लिए लगातार अपनी कलम को हथियार के तौर पर इस्तेमाल किया ।

आज़ादी से पहले के भारतीय साहित्यकार केवल लेखक ही नहीं थे; वे एक वैचारिक क्रांति के अग्रदूत और स्वतंत्रता संग्राम के अनौपचारिक सिपाही थे । उन्होंने लोगों में देशभक्ति की भावना जगाने और क्रांति की आग भड़काने के लिए अपनी कलम को हथियार के तौर पर इस्तेमाल किया । स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान साहित्य ने मार्गदर्शक, जन - जागृति के माध्यम से सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। तत्कालीन साहित्यकारों ने अपनी कलम से भारतवासियों में राष्ट्रवाद की भावना का संचार किया, जिससे विभाजित समाज औपनिवेशिक शासन के खिलाफ एक जुट हो सका। वर्तमान में भारतीय साहित्यकार समाज का दर्पण होने के साथ -साथ उसके मशालची भी हैं । वे न केवल आज के समय की कमियों को दिखा रहे हैं, बल्कि एक बेहतर और संवेदनशील भविष्य का रास्ता भी तैयार कर रहे हैं ।

(यह लेख त्रिभुवन विश्वविद्यालय, काठमांडू, नेपाल के हिंदी केंद्रीय विभाग में प्राध्यापक विमल का हिंदी साहित्य, भाषा विज्ञान और पत्रकारिता पढ़ाने के उनके अनुभव पर आधारित है –सं.)

आजादी का संदेश

पूनम श्रीवास्तव

हमारा राष्ट्रीय पर्व स्वाधीनता दिवस हमारा ऐसा त्यौहार है जो हर भारतीय के मन में बहुत अंदर तक समाया हुआ है। १५ अगस्त आते ही एक अजीब सी खुशी, एक अजीब से प्रसन्नता होती है। जब तिरंगे को देखते हैं, तिरंगे के तीनों रंगों को देखते हैं। हवा में लहराते हुआ तिरंगा एक अलग ही संदेश देता है, आजादी का। लेकिन वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए लगता नहीं कि, हम आजाद हैं गुलामी तो हमारे ऊपर आज भी हो रही है मुगल चले गए, अंग्रेज चले गए, लेकिन दुर्भाग्य ऐसा है कि हमारे ऊपर हमारे अपने ही गुलामी कर रहे हैं। वहां तन की गुलामी थी यहां मन की गुलामी है गुलामी बरकरार है।

वर्तमान में बच्चों के पास शिक्षा,रोजगार नहीं है भारत के नौनिहाल जिन्हें देश का नाम रोशन करना चाहिए था वह अपनी शिक्षा के लिए हक़ की लड़ाई लड़ रहे हैं। अपने हक़ के लिए पिट रहे हैं, गोलियां खा रहे हैं, लाठियां खा रहे हैं। एक बार पुनः ऐसा लगता है कि हम आजाद नहीं हुए। क्या यह वही काल है जब हम गुलाम थे। तिरंगे के तीनों रंग आजादी हमने इसलिए ली थी कि हम एक स्वतंत्र भारत में सांस ले सके इसके लिए हमारे वीर सपूतों ने अपने प्राणों को निछावर कर दिया। ना जाने कितनी माताओं की कोख सुनी हो गई थी, बहनों के भाई चले गए।

भारत की वीर नारियों ने अपने सुहाग का बलिदान दिया। तब कहीं जाकर हमें आजादी प्राप्त हुई है। हमें १५ अगस्त को समझना चाहिए, आजादी के लिए दी जाने वाली कुर्बानियों को, बलिदानों को उसके महत्व को समझना चाहिए और जिन मूल उद्देश्य के लिए आजादी की लड़ाई लड़ी गई थी, भारत स्वतंत्र कराया गया था।

हमें उन मूल उद्देश्य पर कायम रहना चाहिए हमारा भारत एक प्रजातंत्र देश है यहां पर हर नागरिक को अपनी बात बोलने का अधिकार है। यह अधिकार उसे संविधान नें दिया है। उस संविधान की लाज रखना चाहिए, संविधान के नियमों का पालन करना चाहिए तभी सच्चे अर्थ में हम १५ अगस्त मनाने के हकदार बनते हैं। वरना इस आजादी की कोई कीमत नहीं रह जाती हैं।

–भोपाल

आजादी का अमृत: तिरंगे की शान, जिम्मेदारी हमारी

विशाल श्रीवास्तव

१५ अगस्त भारत के इतिहास का वह स्वर्णिम दिवस है, जब १९४७ में देश ने लंबे औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्रता प्राप्त की। यह दिन केवल कैलेंडर की एक तारीख नहीं, बल्कि असंख्य स्वतंत्रता सेनानियों के त्याग, संघर्ष, साहस और बलिदान की जीवंत स्मृति है।हर वर्ष जब तिरंगा आसमान में शान से लहराता है, तो वह हमें याद दिलाता है कि आजादी हमें सहज रूप से नहीं मिली थी। इसके पीछे पीढ़ियों का संघर्ष और अनगिनत लोगों का समर्पण था। आजादी के उस संघर्ष में किसी ने अपना घर छोड़ा, किसी ने अपना सुख-चैन त्यागा, किसी ने जेल की यातनाएं सहीं और किसी ने राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। महात्मा गांधी, भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद, नेताजी सुभाष चंद्र बोस, सरदार वल्लभभाई पटेल, जवाहरलाल नेहरू और असंख्य ज्ञात-अज्ञात सेनानियों का संघर्ष भारत की आत्मा में सदैव जीवित रहेगा लेकिन सवाल यह है कि आजादी के इतने वर्षों बाद हम स्वतंत्रता का अर्थ कितना समझ पाए हैं?

स्वतंत्रता का अर्थ केवल विदेशी शासन से मुक्ति नहीं है। वास्तविक स्वतंत्रता तब सार्थक होगी, जब देश का प्रत्येक नागरिक सम्मान के साथ जीवन जी सके, बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिले, युवाओं को अवसर मिलें, महिलाएं सुरक्षित और आत्मनिर्भर हों, किसान और श्रमिक सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत करें तथा समाज में भेदभाव और असमानता कम हो।

आज भारत विज्ञान, तकनीक, अंतरिक्ष, शिक्षा, उद्योग और डिजिटल क्षेत्र में लगातार आगे बढ़ रहा है। दुनिया के सामने भारत की भूमिका भी तेजी से महत्वपूर्ण हुई है। लेकिन विकास की इस यात्रा के साथ हमारी सामाजिक और नागरिक जिम्मेदारियां भी बढ़ी हैं। आज के भारत को केवल आर्थिक रूप से मजबूत नहीं, बल्कि संवेदनशील, शिक्षित, ईमानदार और जिम्मेदार नागरिकों वाला भारत बनाना होगा। आधुनिक दौर में स्वतंत्रता का अर्थ आत्मनिर्भरता, ज्ञान, तकनीकी क्षमता और अपने निर्णय स्वयं लेने की सामर्थ्य से भी जुड़ गया है।

तिरंगा हमें तीन रंगों के साथ तीन बड़े संदेश भी देता है—साहस, शांति और विकास। इन मूल्यों को केवल राष्ट्रीय पर्व पर याद करना पर्याप्त नहीं है। इन्हें अपने दैनिक जीवन में उतारना ही सच्ची देशभक्ति है।

देशभक्ति केवल हाथ में तिरंगा लेकर नारे लगाने का नाम नहीं। देशभक्ति तब दिखाई देती है, जब हम सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा करते हैं, कानून का सम्मान करते हैं, पर्यावरण को बचाते हैं, अपने आसपास स्वच्छता रखते हैं, जरूरतमंद की सहायता करते हैं और अपने कार्य को ईमानदारी से करते हैं।

आज आवश्यकता है कि हम स्वतंत्रता दिवस को केवल समारोह न बनाएं, बल्कि आत्ममंथन का दिवस भी बनाएं। हम स्वयं से पूछें देश ने हमें क्या दिया, यह महत्वपूर्ण है, लेकिन उससे भी महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि हमने देश के लिए क्या किया और आगे क्या कर सकते हैं?

आजादी की अगली यात्रा हमारे हाथों में है। आने वाली पीढ़ियां हमें उसी तरह याद करेंगी, जैसे हम स्वतंत्रता सेनानियों को याद करते हैं। इसलिए हमें ऐसा भारत बनाने का संकल्प लेना होगा, जहां संविधान के मूल्यों का सम्मान हो, विविधता में एकता मजबूत हो और प्रत्येक नागरिक अपने अधिकारों के साथ अपने कर्तव्यों को भी समझे। १५ अगस्त हमें अतीत के बलिदानों को नमन करने के साथ भविष्य के भारत की नींव मजबूत करने का अवसर देता है। आइए, इस स्वतंत्रता दिवस पर केवल तिरंगा न फहराएं अपने भीतर जिम्मेदारी का दीप भी जलाएं। क्योंकि स्वतंत्रता हमें विरासत में मिली है, लेकिन उसकी गरिमा बनाए रखना हमारी जिम्मेदारी है।

-भोपाल

स्वाधीनता और राष्ट्र चेतना

डॉ. सुनीता त्रिपाठी

जब इतिहास अपनी स्मृतियों के द्वार खोलता है, तब स्वाधीनता केवल एक घटना नहीं रह जाती, वह राष्ट्र की आत्मा का स्वर बन जाती है; और लोकतंत्र केवल संविधान की व्यवस्था नहीं, बल्कि जन-जन के विश्वास की धड़कन बन जाता है।

विश्व इतिहास इस सत्य का साक्षी है कि मनुष्य की सबसे बड़ी आकांक्षा सदैव स्वतंत्र होकर जीने की रही है। जहाँ स्वतंत्रता का हनन हुआ, वहाँ संघर्ष जन्मा; जहाँ अधिकारों का दमन हुआ, वहाँ क्रांति ने दस्तक दी। यही कारण है कि स्वाधीनता और लोकतंत्र मानव सभ्यता की सबसे मूल्यवान उपलब्धियों में गिने जाते हैं। भारत का इतिहास भी इसी अमर यात्रा का गौरवपूर्ण अध्याय है।

भारतीय संस्कृति का मूल दर्शन ही स्वतंत्र चिंतन और लोकतांत्रिक संवाद का रहा है। वैदिक काल की सभा और समिति जैसी संस्थाएँ इस बात का प्रमाण हैं कि भारतीय समाज में सामूहिक विचार-विमर्श और जनभागीदारी की परंपरा अत्यंत प्राचीन रही है। बौद्धकालीन गणराज्य, विशेषकर वैशाली का लिच्छवि गणराज्य, विश्व की प्रारंभिक लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में गिना जाता है। यह तथ्य सिद्ध करता है कि लोकतंत्र भारत के लिए कोई आयातित विचार नहीं, बल्कि उसकी सांस्कृतिक विरासत का स्वाभाविक विस्तार है। समय के साथ विदेशी आक्रमणों और औपनिवेशिक शासन ने भारत की राजनीतिक स्वतंत्रता को छीन लिया, किंतु उसकी आत्मा को पराजित नहीं कर सके। १८५७ का प्रथम स्वाधीनता संग्राम भारतीय अस्मिता के जागरण का प्रथम व्यापक स्वर था। मंगल पांडे, रानी लक्ष्मीबाई, तात्या टोपे, बेगम हजरत महल और असंख्य वीरों ने वीरता का संदेश दिया।

उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन ने अनेक स्वरूप धारण किए। महात्मा गांधी ने सत्य और अहिंसा को संघर्ष का माध्यम बनाया; लोकमान्य तिलक ने उद्घोष किया—स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है वहीं भगत सिंह, चंद्रशेखर आज़ाद, रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्ला खाँ और नेताजी सुभाषचंद्र बोस जैसे क्रांतिकारियों ने अपने अदम्य साहस और बलिदान से स्वतंत्रता की लौ प्रज्वलित रखी।

१५ अगस्त १९४७ को भारत स्वतंत्र हुआ, किंतु स्वतंत्रता का यह प्रभात विभाजन की पीड़ा से भी जुड़ा था। लाखों लोगों ने विस्थापन, हिंसा और असहनीय कष्टों का सामना किया। इस त्रासदी ने हमें यह सिखाया कि स्वतंत्रता का वास्तविक सौंदर्य शांति, सद्भाव और राष्ट्रीय एकता में निहित है।

स्वतंत्रता के पश्चात भारत के सामने सबसे बड़ी चुनौती एक ऐसे राष्ट्र के निर्माण की थी जहाँ विविध भाषाएँ, धर्म, संस्कृतियाँ और परंपराएँ समान सम्मान के साथ विकसित हो सकें। इस ऐतिहासिक दायित्व का निर्वहन भारतीय संविधान ने किया। २६ जनवरी १९५० को लागू हुए संविधान ने भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में स्थापित किया। संविधान ने प्रत्येक नागरिक को समानता, स्वतंत्रता, न्याय और बंधुत्व का अधिकार प्रदान किया।

भारतीय लोकतंत्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यहाँ सत्ता का अंतिम स्रोत जनता है। नियमित चुनाव, स्वतंत्र न्यायपालिका, स्वतंत्र प्रेस, संघीय व्यवस्था और मौलिक अधिकार लोकतंत्र को सशक्त बनाते हैं किंतु लोकतंत्र केवल संस्थाओं से नहीं चलता; उसकी वास्तविक शक्ति जागरूक, नैतिक और उत्तरदायी नागरिकों में निहित होती है। लोकतंत्र का अर्थ केवल अधिकारों की माँग करना नहीं, बल्कि संविधान के प्रति निष्ठा, सामाजिक समरसता, सहिष्णुता और कर्तव्यपालन को जीवन का अंग बनाना है।

आज भारत विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र के रूप में नई ऊँचाइयों की ओर अग्रसर है। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, अंतरिक्ष, शिक्षा, कृषि और अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में हमारी उपलब्धियाँ इस बात का प्रमाण हैं कि स्वतंत्रता और लोकतंत्र मिलकर राष्ट्र की विकास यात्रा को गति देते हैं परंतु इन उपलब्धियों के साथ-साथ हमें यह भी स्मरण रखना होगा कि लोकतंत्र की रक्षा केवल संसद में नहीं होती; वह विद्यालयों में, परिवारों में, समाज में और प्रत्येक नागरिक के आचरण में होती है। इतिहास हमें गौरव देता है, वर्तमान हमें अवसर देता है और भविष्य हमें उत्तरदायित्व सौंपता है। यदि हम स्वतंत्रता सेनानियों के त्याग, संविधान निर्माताओं की दूरदर्शिता और लोकतांत्रिक मूल्यों की गरिमा को अपने जीवन में आत्मसात करें, तभी भारत का लोकतंत्र और अधिक सुदृढ़ होगा। स्वाधीनता राष्ट्र का प्राण है और लोकतंत्र उसकी चेतना। प्राण के बिना जीवन नहीं और चेतना के बिना उसका कोई अर्थ नहीं। अतः इन दोनों की रक्षा करना केवल सरकार का नहीं, बल्कि प्रत्येक भारतीय का सर्वोच्च राष्ट्रीय धर्म है।

– लखनऊ

स्वाधीनता और हम

– डॉ. कविता मल्होत्रा

स्वाधीनता का अर्थ है स्वंय के अधीन होना। अपनी शर्तों पर सम्मानपूर्वक जीवन जीना और बिना किसी बाहरी दबाव के अपने निर्णय लेने की स्वतंत्रता पाना। स्वाधीनता केवल एक शब्द नहीं बल्कि किसी भी राष्ट्र और उसके नागरिकों की आत्मा होती है। भारत के संदर्भ में, यह स्वाधीनता हमें सदियों के संघर्ष, अनगिनत बलिदानों और माँ भारती के सपूतों के अथक प्रयासों के बाद हासिल हुई है।

१५ अगस्त १९४७ को भारत ने विदेशी हुकूमतों से आज़ादी पाई। महात्मा गांधी, भगत सिंह, सुभाष चंद्र बोस, चंद्र शेखर आजाद और रानी लक्ष्मी बाई जैसे अनगिनत स्वाधीनता सेनानियों ने एक ऐसे भारत का सपना देखा जहाँ हर नागरिक को समानता, न्याय और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता मिले। आज के समय में स्वाधीनता से हमारा संबंध केवल अतीत को याद रखने तक सीमित नहीं है, बल्कि वर्तमान की ज़िम्मेदारियों से जुड़ा हुआ है।

राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्त कर लेने के बाद, अब हमारी ज़िम्मेदारी सामाजिक, आर्थिक और मानसिक स्वाधीनता को प्राप्त करने की है। जब तक समाज में अशिक्षा, गरीबी, लिंगभेद, जातिवाद और भ्रष्टाचार जैसी कुरीतियाँ मौजूद हैं, तब तक हमारी स्वाधीनता अधूरी है। स्वाधीनता हमें मनमानी करने की छूट नहीं देती, बल्कि यह हमें ज़िम्मेदार और अनुशासित बनने का अवसर प्रदान करती है। सच्चे स्वाधीन नागरिक का का यह दायित्व है कि वह कानून का पालन करे, पर्यावरण की रक्षा करे, सार्वजनिक संपत्ति को नुक़सान न पहुँचाए और कमज़ोर वर्गों का सहयोगी बने।

डिजिटल युग के दौर में मानसिक और वैचारिक स्वाधीनता के बीच संतुलन बनाने के लिए ऑनलाइन पर उपलब्ध भ्रामक सूचनाओं के अंधानुकरण से मुक्त रहकर कोई भी निर्णय लेना ही वास्तविक अर्थ में वैचारिक स्वाधीनता का प्रतीक है। अपनी सांस्कृतिक बुनियाद से जुड़े रहकर ही हम एक सशक्त राष्ट्र का निर्माण कर सकते हैं। देश की प्रगति किसी सरकार या संस्था की ज़िम्मेदारी नहीं, बल्कि देश के नागरिकों का सामूहिक दायित्व है।

आर्थिक और तकनीकी स्वावलंबन के लिए स्वतंत्र सोच जरूरी है। आत्मनिर्भर भारत की दिशा तय करने के लिए गुलाम मानसिकता नहीं बल्कि एक मजबूत रणनीति की आवश्यकता होती है जिसका नेतृत्व विकसित और सशक्त सोच वाली पीढ़ी ही कर सकती है।

स्वाधीनता एक ऐसी धरोहर है जो हमारे देश को तभी समृद्ध कर सकती है जब हम एक संगठित, न्यायिक और संस्कारवान राष्ट्र के निर्माण में अपना योगदान दें। वीरों के बलिदान से मिली आज़ादी को सहेज कर रखना और सम्मानित करना हर पीढ़ी का दायित्व है। हम सभी को इस संकल्प का अनुसरण करना चाहिए कि हम समाज के उत्थान के लिए अपनी स्वाधीनता का उपयोग जीवन मूल्यों के आधार पर ही करेंगे, तभी हमारा भारत विश्व गुरु की गरिमा को सार्थक कर पाएगा।

वर्तमान पीढ़ी के सामने सबसे महत्वपूर्ण चुनौती है अपने संवैधानिक मूल्यों की रक्षा करना। राष्ट्र पिता महात्मा गांधी ने कहा था, स्वतंत्रता का अर्थ अपनी सुधारने की आज़ादी में निहित है।

हमें बाबा साहेब डॉ. भीमराव अंबेडकर के इस विचार को हमेशा याद रखना चाहिए जिसमें उन्होंने चेतावनी दी थी कि राजनीतिक स्वतंत्रता तब तक अधूरी है, जब तक उसे सामाजिक स्वतंत्रता का आधार न मिले। आर्थिक और तकनीकी क्षेत्र में आत्मनिर्भरता हासिल करना हमारे स्वाधीन भारत के युवाओं की प्राथमिकता होनी चाहिये।

आज की पीढ़ी केवल नौकरियाँ तलाशने के लिए शिक्षा ग्रहण न करें बल्कि, अपने कौशल और नवाचार के ज़रिए रोज़गार पैदा करने वाली बने। मिसाइल मैन डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम का मानना था कि युवाओं को नौकरी चाहने वाले के बजाय नौकरी देने वाला बनना चाहिए। आत्मनिर्भर भारत का सपना तभी साकार होगा, जब देश का युवा स्थानीय स्तर पर समस्याओं के आधुनिक समाधान ढूँढेगा।

शिक्षा और ज्ञान को केवल डिग्री तक सीमित न रखकर, उसे कौशल और उत्पादकता में रूपांतरित करना ही स्वाधीन पीढ़ी का मुख्य लक्ष्य होना चाहिए। सतत विकास और पर्यावरण संरक्षण आज की स्वाधीन पीढ़ी की सबसे बड़ी चुनौती है। जलवायु परिवर्तन के

इस दौर में स्वाधीन पीढ़ी का एक दायित्व, आने वाली पीढ़ियों को स्वच्छ हवा, शुद्ध पानी और हरी-भरी धरती सौंपना भी है। स्वामी विवेकानंद जी ने युवाओं को प्रेरित करते हुए कहा था- उठो, जागो और तब तक मत रूको, जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाए।

आज हमारा लक्ष्य एक स्वच्छ और हरा-भरा भारत बनाना होना चाहिए। पानी की बर्बादी रोकना, सिंगल यूज़ प्लास्टिक का बहिष्कार करना और प्रकृति का सम्मान करना आज के युवाओं की देशभक्ति का प्रतीक होना चाहिए। देश के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन उतना ही ज़रूरी है, जितना अपने अधिकारों की मांग करना। नेता जी सुभाष चंद्र बोस ने कहा था, याद रखिए कि सबसे बड़ा अपराध अन्याय और गलत के साथ समझौता करना है। टैक्स का सही समय पर भुगतान, यातायात के नियमों का पालन, मतदान में पारदर्शिता, और सभी नागरिक कर्तव्यों को निभाना ही सच्ची देशभक्ति है। जब तक हर युवा अपने व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर उठकर राष्ट्र हित को सर्वोपरि नहीं रखेगा, तब तक स्वाधीनता का वास्तविक अर्थ और उद्देश्य अधूरा ही रहेगा, क्योंकि सक्रिय नागरिकता ही स्वाधीनता को जीवित रखती है।

वर्तमान पीढ़ी एक ऐसे मोड़ पर खड़ी है, जहाँ उसके छोटे-छोटे प्रयास भारत को विश्व पटल पर एक महाशक्ति बनाने का सपना साकार कर सकते हैं। पूर्वजों से मिली आज़ादी एक उपहार थी, लेकिन महापुरुषों के दिखाए रास्ते पर चलकर उस आज़ादी को सुशासन, समृद्धि और समानता में बदलना आज की पीढ़ी का सबसे बड़ा दायित्व है। –नई दिल्ली

आजादी के दिनः सच हुआ अनुभव

मंजूषा रमण धाकरे

बात जून २००० की है। हम लोगों को सप्ताह के बाजार शहर जाना पड़ता था। ऐसे ही हम सोमवार के दिन बाजार गए। आसपास के सभी अपनों की भी भेंट हो जाती थी।

परदेशी गली में हमारे पिता का पुश्तैनी मकान था, जहाँ छोटे चाचा-चाची रहते थे। कभी हम भी रह चुके हैं। माँ भी बाजार के लिए आई थी। उसी गली में कटे हनुमान मंदिर था। मंदिर तो छोटा था, पर ओटले पर बड़ा-सा मंडप लगा हुआ था। हमने पूछा तो माँ, चाची कहने लगीं कि राजस्थान से कोई पंडित आए हैं। बहुत सटीक भविष्य बताते हैं। हमने कोई रुचि नहीं दिखाई। तो माँ कहने लगी, चलो, आप भी अपनी हथेली बता देना। हमने कहा कि संघर्ष कम थोड़ी न होंगे। जब पढ़ना चाहते थे, पढ़ने नहीं दिया। अब क्या लाभ? दक्षिणा के लिए हमारे पास पैसे नहीं हैं, यह कहते हुए टाल दिया। ज्यादा आग्रह होने पर चले गए। पंडित जी शुरू किए। बोले, भविष्य में सरकारी जॉब कर सकती हैं। लेखन कार्य में सफल रहेंगी। मान-सम्मान मिलेगा। हमसे रहा नहीं गया। हमने पलटकर जवाब दिया, जब ठीक से पढ़ाई नहीं हुई तो जॉब, लेखन कार्य यह हो नहीं सकता। यहाँ तो खेती-बाड़ी, गाय, भैंस, भेड़-बकरी, सिलाई, कढ़ाई—जो बन पड़े, करते-करते उम्र निकल जाएगी। फिर भी पंडित जी कहने लगे, नहीं, आपकी सभी मनोकामनाएँ भी पूरी होंगी। हम पैर पटकते, लटका मुँह लिए घर आ गए। दो-चार दिन में ही हमारे जीजा जी का भी देहांत हो गया। सुनने में आया कि पंडित जी ने पहले ही बता दिया था। धीरे-धीरे पता चला कि उनकी भविष्यवाणियाँ सच हो रही थीं। फिर सितंबर २००१ में हमारे पति का भी निधन हो गया। सोलह बरस से मानो हाथ से कलम छूट चुकी थी। फिर हमने मुद्रांक बिक्री, दस्त लेखन कार्य में मई २००२ में कलम हाथ पकड़ ली। लिखना शुरू किया और अपने बलबूते पर हमारे तीन काव्यसंग्रह और एक नाटिका पुस्तक प्रकाशित हुई।

१५ अगस्त २०२६ को पहली पुस्तक का लेखन पूर्ण होने के साथ उन पंडितों की हर एक बात सामने आने लगी। बहुत से लोगों ने अपनापन, सम्मान दिया। इन सभी बातों के पीछे भी मौत का कुआँ जैसा संघर्ष कम न था। दूर-दूर तक परिचय बढ़ता गया। यही से हम ज्योतिष शास्त्र पर भी विश्वास करने लगे। वैसे हम खुद ही अपने आप में समझने में भ्रमित रहते हैं, क्योंकि किसी भी शास्त्र पर विश्वास करें या न करें। हो सकता है स्वाधीनता संघर्ष के दौरान लोगों द्वारा दी गई कुर्बानियों की तरह शायद हमारी कुर्बानी भी काम आए।

–छत्रपति संभाजीनगर, महाराष्ट्र

स्वाधीनता के लिए अहिंसक जन आंदोलन

निलेश देसाई

स्वाधीनता दिवस पर हम सर्वप्रथम महात्मा गांधी को याद करते हैं जिन्होंने सत्याग्रह को कभी आंदोलन की तकनीक नहीं माना। उनके लिए सत्याग्रह सत्य की खोज, आत्मबल की अभिव्यक्ति और लोकतंत्र की नैतिक चेतना को जागृत करने का माध्यम था। वे कहते थे कि जब कोई व्यक्ति बिना घृणा, बिना हिंसा और बिना प्रतिशोध के अन्याय का सामना करते हुए स्वयं कष्ट सहता है, तो वह केवल शासक से नहीं, बल्कि पूरे समाज की अंतरात्मा से संवाद करता है।

सत्याग्रह का उद्देश्य प्रतिद्वंद्वी को पराजित करना नहीं, बल्कि उसके भीतर सोई हुई नैतिक संवेदना को जगाना है। यही कारण है कि सत्याग्रह केवल सत्याग्रही के साहस पर निर्भर नहीं करता। उसकी सफलता इस बात पर भी निर्भर करती है कि समाज, मीडिया और शासन उस पीड़ा को देखने, समझने और उसका उत्तर देने के लिए तैयार हैं या नहीं। यदि सुनने की यह क्षमता कमजोर पड़ जाए तो सत्याग्रह का नैतिक प्रभाव भी क्षीण होने लगता है।

हाल के वर्षों में शिक्षा, पर्यावरण, कृषि, रोजगार, भूमि अधिकार और क्षेत्रीय स्वायत्तता जैसे अनेक मुद्दों पर शांतिपूर्ण धरने, पदयात्राएँ और अनशन हुए हैं। इनमें से कुछ को व्यापक समर्थन मिला, कुछ को सीमित ध्यान मिला और कुछ लगभग सार्वजनिक विमर्श से बाहर रह गए, लेकिन इनसे अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या आज भी अहिंसक प्रतिरोध लोकतांत्रिक निर्णय-प्रक्रिया को प्रभावित करने की क्षमता रखता है? यह प्रश्न केवल किसी एक आंदोलन या सरकार का नहीं है। यह भारतीय लोकतंत्र की आत्मा का प्रश्न है।

भारत का स्वतंत्रता संग्राम विश्व इतिहास का शायद सबसे बड़ा अहिंसक जनांदोलन था। गांधी ने यह स्थापित किया कि जनता की नैतिक शक्ति किसी भी साम्राज्य की राजनीतिक शक्ति से बड़ी हो सकती है। स्वतंत्रता के बाद भी इसी परंपरा ने भूदान आंदोलन, चिपको, सूचना के अधिकार, नर्मदा बचाओ आंदोलन, जनलोकपाल आंदोलन और अनेक स्थानीय जनसंघर्षों को दिशा दी। इन आंदोलनों ने लोकतंत्र को कमजोर नहीं किया; बल्कि उसे अधिक उत्तरदायी बनाया।

डिजिटल युग ने इस चुनौती को और जटिल बना दिया है। आज सूचना पहले पहुँचती है और समझ बाद में बनती है। सोशल मीडिया ने नागरिकों को अभिव्यक्ति का अभूतपूर्व अवसर दिया है, लेकिन उसी के साथ समाज वैचारिक खेमों में भी बँट गया है। किसी भी आंदोलन का मूल्यांकन उसके तर्कों से पहले उसकी राजनीतिक पहचान के आधार पर होने लगता है। परिणामस्वरूप संवाद की बजाए आरोप-प्रत्यारोप उसका स्थान ले लेते हैं।

लोकतंत्र में असहमति होना स्वाभाविक है। हर आंदोलन सही हो, यह आवश्यक नहीं। हर मांग स्वीकार हो, यह भी संभव नहीं। किसी भी लोकतंत्र की परिपक्वता इस बात से मापी जाती है कि वह असहमति का उत्तर किस प्रकार देता है। क्या वह संवाद करता है? क्या वह तथ्यों के आधार पर बहस करता है? या फिर वह विरोध करने वाले की नीयत पर ही प्रश्नचिह्न लगा देता है?

गांधी का सबसे बड़ा योगदान यह था कि उन्होंने राजनीति को नैतिकता से जोड़ा। उन्होंने यह विश्वास पैदा किया कि बिना हिंसा के भी अन्याय का प्रतिरोध किया जा सकता है। यदि यह विश्वास कमजोर पड़ने लगे कि शांतिपूर्ण प्रतिरोध का कोई अर्थ नहीं रह गया है, तो इसका असर केवल आंदोलनों पर नहीं पड़ेगा; यह लोकतंत्र की बुनियाद को प्रभावित करेगा।

ऐसी स्थिति में समाज सामान्यतः तीन दिशाओं में बढ़ता है- पहली है उग्रता। जब लोगों को लगता है कि शांतिपूर्ण मार्ग से कुछ नहीं बदलता, तब कुछ लोग हिंसक या कट्टर रास्तों की ओर आकर्षित हो सकते हैं। इतिहास में इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं। दूसरी है, उदासीनता। लोग यह मान लेते हैं कि उनकी आवाज़ का कोई महत्व नहीं है। वे सार्वजनिक जीवन से दूरी बना लेते हैं। यह मौन लोकतंत्र के लिए उतना ही खतरनाक है जितनी हिंसा, क्योंकि इससे जवाबदेही की संस्कृति कमजोर होती है।

तीसरी दिशा आशा की है। प्रत्येक पीढ़ी अपने समय के अनुरूप प्रतिरोध के नए माध्यम खोजती है। गांधी के समय चरखा, 'दांडी यात्रा' और पदयात्राएँ प्रतीक बने थे। आज डिजिटल अभियान, नागरिक नेटवर्क, सामुदायिक संवाद, जनसुनवाई और सोशल मीडिया माध्यम बन रहे हैं। अहिंसा समाप्त नहीं होती; वह अपने स्वरूप बदलती है, किंतु उसका नैतिक आधार वही रहता है—सत्य, आत्मानुशासन और संवाद। यहीं लोकतंत्र की असली परीक्षा आरंभ होती है। क्या हमारी संसद, हमारी सरकारें, हमारा मीडिया और हमारा नागरिक समाज ऐसी आवाज़ों को सुनने की संवेदनशीलता बनाए रख पाया है? क्या हम असहमति को लोकतंत्र का स्वाभाविक अंग मानते हैं या उसे संकट के रूप में देखने लगे हैं? सत्याग्रह का अर्थ केवल विरोध नहीं, बल्कि लोकतंत्र की नैतिक परीक्षा भी है। जब कोई नागरिक बिना हिंसा के अपनी पीड़ा लेकर समाज और सत्ता के सामने बैठता है, तब केवल सरकार ही नहीं, पूरा समाज परीक्षा में होता है। प्रश्न यह नहीं

कि हम उस आंदोलन से सहमत हैं या असहमत। प्रश्न यह है कि क्या हम उसे सुनने के लिए तैयार हैं। लोकतंत्र केवल मतदान से नहीं चलता। वह इस भरोसे से चलता है कि यदि कोई नागरिक शांतिपूर्ण ढंग से अपनी बात रखेगा, तो उसकी बात सुनी जाएगी। यदि यह भरोसा टूटता है, तो सबसे बड़ी हार किसी आंदोलन की नहीं होती; लोकतंत्र की होती है। दुर्भाग्य से आज असहमति को विचारों के मतभेद के रूप में नहीं, बल्कि विरोधी के प्रति नफ़रत के रूप में देखने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। असहमति से नफ़रत का यह दौर लोकतंत्र की जड़ों को हिला रहा है। लोकतंत्र वहीं जीवित रहता है जहाँ विचारों का संघर्ष होता है, व्यक्तियों का नहीं। आज आवश्यकता केवल गांधी को याद करने की नहीं है, बल्कि उनके उस नैतिक आग्रह को पुनर्जीवित करने की है जिसमें विरोधी भी शत्रु नहीं, संवाद का सहभागी होता है। किसी भी राष्ट्र की वास्तविक शक्ति उसकी आर्थिक वृद्धि या सैन्य क्षमता से नहीं, बल्कि अपनी आलोचना को सुनने, असहमति का सम्मान करने और आवश्यकता पड़ने पर स्वयं को सुधारने की क्षमता से मापी जाती है। सत्याग्रह इसलिए अतीत की विरासत भर नहीं है। वह भविष्य के लोकतंत्र की भी अनिवार्य शर्त है।

(सप्रेस)

लोकतंत्र पर मंडराता संकट

कलादास डेहरिया

लोकतंत्र केवल एक शासन व्यवस्था नहीं है, बल्कि यह हमारे संविधान की आत्मा है, हमारे अधिकारों की रक्षा का सबसे बड़ा माध्यम है लेकिन आज यह सवाल उठना लाज़िमी हो गया है कि क्या हम वास्तव में उसी लोकतंत्र में जी रहे हैं, जिसके लिए हमारे अमर शहीदों ने अपने प्राणों की आहुति दी थी?

आज हम देख रहे हैं कि सत्ता में बैठे लोग बदले की भावना से शासन चला रहे हैं। विपक्ष को देशद्रोही कहा जा रहा है, और जो जनता उनके साथ खड़ी होती है, उसे भी उसी नजर से देखा जा रहा है। मैं पूछना चाहता हूँ—देशद्रोही होने का मापदंड क्या है? क्या सरकार की नीतियों का विरोध करना देशद्रोह है? क्या सवाल पूछना गुनाह है? अगर ऐसा है, तो फिर लोकतंत्र का अस्तित्व ही क्या रह जाएगा?

हमारा संविधान हमें अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता देता है, हमें अधिकार देता है कि हम सरकार से सवाल करें, उसकी नीतियों की आलोचना करें। लेकिन आज स्थिति यह बन गई है कि आलोचना को देशद्रोह करार दिया जा रहा है, और चुप रहना ही देशभक्ति माना जा रहा है। यह न केवल लोकतंत्र, बल्कि संविधान की मर्यादा पर भी गंभीर आघात है।

संसद और विधानसभाएँ वह स्थान हैं, जहाँ जनहित के मुद्दों पर स्वस्थ बहस होनी चाहिए। जहाँ देश के भविष्य की दिशा तय होनी चाहिए। लेकिन आज वहाँ संवाद कम और टकराव अधिक दिखाई देता है। ऐसा लगता है मानो लोकतांत्रिक मंच नहीं, बल्कि दो विरोधी पक्षों का युद्ध चल रहा हो।

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि यह लोकतंत्र हमें आसानी से नहीं मिला। हमारे स्वतंत्रता सेनानियों ने लंबा संघर्ष किया, अपने प्राणों की आहुति दी, तब जाकर हमें यह अधिकार मिला। आज जब हम उनकी कुर्बानियों को याद करते हैं, तो यह भी सोचने की जरूरत है कि क्या हम उनके सपनों के भारत की दिशा में आगे बढ़ रहे हैं?

आज आवश्यकता है कि जो भी पार्टी सत्ता में हो, वह दलगत राजनीति से ऊपर उठकर पूरे देश के विकास की बात करे। हर नागरिक को समान दृष्टि से देखे। आलोचना को दुश्मनी नहीं, बल्कि सुधार का अवसर समझे। संवाद और सहमति के माध्यम से निर्णय ले—यही एक स्वस्थ लोकतंत्र की पहचान है।

मीडिया की भी एक बड़ी जिम्मेदारी है। उसे सच्चाई दिखानी चाहिए, समाज को जोड़ने का काम करना चाहिए। लेकिन जब केवल टकराव और विवाद को ही प्रमुखता दी जाती है, तो उसका असर हमारी आने वाली पीढ़ियों पर पड़ता है। यह लोकतंत्र के लिए एक गंभीर खतरा है।

इसलिए आज हम सभी का यह कर्तव्य बनता है कि हम लोकतंत्र की रक्षा के लिए आगे आएँ। सवाल पूछें, सच के साथ खड़े रहें, और संविधान के मूल्यों को मजबूत करें।

आइए, हम संकल्प लें— हम लोकतंत्र को कमजोर नहीं होने देंगे, हम संविधान की मर्यादा को बनाए रखेंगे, और एक ऐसे भारत के निर्माण में योगदान देंगे, जहाँ संवाद, सहमति और समानता सर्वोपरि हो।

–छत्तीसगढ़

गांधी का सत्याग्रह

स्मिता जैन 'रेवा'

युवा भारत का पौरूष
अब जाग चुका है
युवा भारत अब निकला है
अपने हक़ को मांगने
हाथों में हाथ लेकर
तिरंगा थामे सड़कों पर।
उड़ गए हाथों से तोते
जातीयता और सांप्रदायिकता के
ज़हर से उन्माद फैलाने वाले
राजनीति की रोटियां
सेंकने वाले लोग
हो रहे हैं इतना बेबस
अपनी सत्ता को बचाने।
लगे हैं मनाने हर हाल में
जेन जी और जेन अल्फा को
विकेट गिर रहे हैं
गांधी के सत्याग्रह के आगे
यूं लगता है कि
सो साल से सत्ता पाने वाले लोगों का
काले जादू का सम्मोहन टूट चुका है
भारत में युवा सूरज उदय हो गया है।

-छतरपुर

तभी पाई ये आजादी

विवेक दुबे 'निश्चल'

आजादी जब से मिली ,पाये दिन अनमोल ।
प्राणों को जो हुत किये,उनकी जय जय बोल ।

उनकी जय जय बोल,करो यादों को ताजा ।
गाओ गीतों सँग, अमर वीरों की गाथा ।

फिजां हुई रंगीन ,महकती है अब वादी।
वीरो के बलिदानों की,न होने दें बर्बादी ।

पाए दिन अनमोल,मिली जो आजादी।
खोये थे वो प्राण, तभी पाई ये आजादी ।

-रायसेन

पहाड़ों की पुकार

शारदा स्टेफी

पहाड़ की गोद में बैठकर देखती हूँ
तिरंगा लहराता हुआ,
स्वतंत्रता की हवा के साथ
देशभक्ति का गीत गाती हूँ,
दिल के अंदर कहीं घाव हराता हुआ।
१५ अगस्त आता है,
बलिदान की कथा याद दिलाता है,
शहीदों के खून से लिखा इतिहास हमें जगाता है।
गोर्खालैंड मेरे दिल का टुकड़ा,
कब होगा ये पूरा?
युग बीत गए आशा-ही-आशा में,
अब मत चलाना छुरा।
चाय बागान, कुलैनबारी, मकई और
धान के खेतों से लेकर
कंचनजंघा की चोटी तक फैला हुआ सपना
केवल सपना बनकर न रह जाएँ
हम करोड़ों गोर्खाओं की चाहना।
हमारी पहचान, हमारी भाषा, हमारे गर्व का नाम।
संविधान की छाँव में मिले हमें
उज्ज्वल भविष्य और सम्मान।
स्वतंत्र भारत में स्वाभिमानी गोर्खा,
दिल में देश प्रेम की प्यास
और आँखों में देखो तिरंगा।
शांति चाहिए, न्याय चाहिए,
गोर्खालैंड की पहचान के साथ
उज्ज्वल भविष्य और तिरंगा चाहिए।
आज वंदना करते हैं देश को
आज़ाद करने वाले वीर-वीरांगनाओं की,
आँखों में आँसू, हृदय में श्रद्धा लेकर।
वीरों की संतान हम रखेंगे मान,
जिएंगे वीर भद्र बनकर।
कल बनाएंगे नया इतिहास
अनेकता में एकता के साथ मिलकर।
स्वतंत्रता दिवस पर सच हो जाए हमारा सपना,
यही संकल्प लेकर।
कितना और तड़पें, हे स्वदेश माँ!
अब तो हमारी पुकार सुन ले।
कितना और माँगें याचक बनकर,
देश ने आज़ादी पाई,
वैसे हमें भी हमारी भूमि दे।
जय भारत माता के नारे के साथ
स्वतंत्रता दिवस मनाते हैं।
गोर्खालैंड हमारी पहचान है,
ये अंतर्मन से चिल्लाकर कहते हैं।
जय गोर्खालैंड, जय भारत माता।

—लिजाहिल, दार्जिलिंग

स्वाधीन भारत में हम...

शीला श्रीवास्तव

स्वाधीन भारत में हमने लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था को अंगीकार किया। लोकतंत्र से तात्पर्य लोकतंत्र जनता का जनता के द्वारा और जनता के लिए शासन का होना कहा जाता है।

इसमें सत्ता किसी राजा के हाथ में नहीं होती यह सभी नागरिकों में निहित होती है। हम यानी देश का हर नागरिक लोकतंत्र की बड़ी ताकत माना जाता है, जनता को भागीदारी वोट के द्वारा मिलती है।

चुनाव में अपने मौलिक अधिकार का प्रयोग करना मतदाता का अधिकार है, हम मतदान करके इस अधिकार का प्रयोग कर सकते हैं।

एक सजग नागरिक की तरह हमें सरकार के फैसलों में नजर रखना चाहिए तर्क और वितर्क भी कर सकते हैं, बस देश द्रोह की भावना नहीं होनी चाहिए।

लोकतंत्र में कानून का शासन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, कानून की नजर में सभी नागरिक समान होते हैं। लोकतंत्र में मीडिया और न्यायपालिका जैसे स्वतंत्र स्तंभ हमारी स्वतंत्रता की रक्षा करते हैं। लोकतंत्र में हमारी भूमिका होती है मतदान,कानून पालन में सक्रिय भागीदारी निभाना होती है, लोकतंत्र में केवल राजनेताओं का काम नहीं है।

यह हमारे सभी नागरिक समूह की जिम्मेदारी मानी जाती है हमें मतदान करने में सुरक्षा से अधिकार होता है कि हम जिसको चाहे उसको मतदान कर सकते हैं, यदि किसी वर्ष हमने किसी गलत व्यक्ति को अपना वोट दे दिया, तो दूसरे चुनाव में हमको अधिकार है कि हम अपनी इस गलती का सुधार कर सकते हैं और जिसको उचित समझे अपना प्रतिनिधि मानकर उसको वोट दे सकते हैं, यह एक प्रकार की शासन व्यवस्था है।

इस प्रणाली से जनता को सामाजिक और न्याय जैसे आर्थिक व्यवस्था तथा धर्मनिरपेक्षता भी मिलती है।

लोकतंत्र बहुलवादी सिद्धांत है, लोकतंत्र के विषय में पूर्ण परिभाषा देना कठिन है। हर देश की अपनी नीतियों पर निर्भर करता है, लोकतंत्र तानाशाही शासन से बेहतर माना जाता है। प्रतिनिधि को जनता से वोट मांगने जाना पड़ता है, जनता की जवाब दारी होती है कि वह अपने मतदान का सही प्रयोग करें।

यदि जनता की मनपसंद सरकार नहीं बनती तो अगले चुनाव में वह अपना मनपसंद प्रतिनिधि को स्थापित करने का अधिकार रखती है, यह एक टकराव सुधारने का मंच है विभिन्न विचारों के समाजों पर टकराव होना स्वाभाविक है, लोकतंत्र इस तरह के विवादों का कानूनी व्यवस्था से सुधार करने का अवसर देता है।

हमारे देश में बहुत सारी पार्टियाँ बन जाती हैं। सब अपने अपने चुनाव चिह्नों के द्वारा जनता को आकर्षित करते हैं, इसमें शिक्षित लोग सही मतदान करते हैं, परंतु अशिक्षित होने से गलत मतदान कर जाते हैं।

अभी भी हमारे देश में शिक्षा की कमी है परंतु शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार सभी को है बच्चे, बूढ़े, जवान सभी शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार हैं। हमारे देश में लोकतंत्र का एक कानून है जो बच्चों की विवाह तथा गैरकानूनी काम करने पर सजा का व्यवधान है।

हम एक लोकतांत्रिक देश के नागरिक हैं यह हमारा सौभाग्य है, हमारे देश में कुछ अपरिहार्य कारणों से पूर्णलोकतांत्रिक विधान को लागू करने में बाधक बन रहे हैं। लोकतंत्र सिर्फ राजनीतिक दलों ही नहीं, सामाजिक संगठन ऐसे प्रेशर ग्रुप की जरूरत भी पड़ती है जो राजनीतिक धारा को मोड़ सके और राजनीतिक दलों को मजबूर कर सके कि वह सुझाव मुद्दों पर बात करें।

स्वाधीनता का अर्थ गलत लगाया जाता है। इसके अंतर्गत कुर्सी के लालच में सरकार के विरुद्ध गलत बयान बाजी करना सरकार की नीतियों का गलत बताना दुर्भाग्यपूर्ण है। मुख्यत: हमें अपने देश की संप्रभुता, अखंडता, एकता, को मिटाने का अधिकार किसी को भी नहीं है। इस तरह की धारणाएं लोकतंत्र में देशद्रोही कहीं जा सकती है। लोकतंत्र एक सुदृढ़ राष्ट्रीय देश बनाने का मजबूत स्तंभ है। हमें हमें अपनी नागरिकता का अपने मौलिक अधिकारों का सही ढंग से प्रयोग करना चाहिए। हर नागरिक का कर्तव्य है अपने देश की उन्नति के लिए सबका साथ सबका विकास वाली भावनाएं रखें तभी स्वाधीनता और लोकतंत्र को शाश्वतता और जीवंतता दी जा सकती है।

-भोपाल

स्वाधीन रहते पराधीन ना हों

डॉ. सीमा अग्रवाल

भारत को स्वाधीन हुए ७९ वर्ष हो गए हैं फिर भी बहुत जगह देश, व्यक्ति पराधीन सा नजर आता है। आज भी हमारे देश में अमीर- गरीब का इतना फासला है कि हम मजदूर, कर्मचारी घर के कार्य करने वालों को निम्न दृष्टि से देखते हैं साथ ही वह सम्मान से आज भी नहीं जी रहे हैं।

स्वाधीनता ऐसे देश में जहां ४० प्रतिशत लोग निम्न वर्ग की श्रेणी में आते हैं, उनको निम्न ही हम बनाए रखना चाहते हैं जिससे वह हमारे छोटे-छोटे कार्यों में उलझे रहें। स्वाधीन हुए हमें इतने साल हो गए, पर क्या हम अब भी विचारों, कर्तव्यों, मन से स्वतंत्रता महसूस करते हैं? क्या आज भी हमारे देश की स्त्री को पूर्व स्वतंत्रता हासिल है कि वह अपना भरण पोषण कर अपने मां-बाप की भी सेवा कर सके। कुछ लोगों को छोड़कर क्या आज भी वह अपनी बात खुलकर कह सकती है? क्या वह अपने सपनों को जीने का अधिकार रखती है?

साथ ही समाज में क्या न्याय व्यवस्था सुचारू रूप से चल रही है? क्या स्वाधीन देश में अन्याय के खिलाफ आवाज उठाने का पूर्ण अधिकार प्राप्त हो गया है? हम अपने अधिकार यदि जानते भी हैं, तो क्या हम दूसरे के अधिकारों का भी सम्मान करते हैं? कहीं ऐसा तो नहीं हम दूसरों का हनन कर रहे हैं। हम अपने स्वार्थ के लिए दूसरों का शोषण तो नहीं कर रहे?

हमारा अहंकार हमें यह साबित करने दे रहा कि हम गलत हैं। हमें ऐसे बहुत से सवालों का सामना करना है। पहले से चले आ रहे मापदंडों को तोड़ देश के उत्थान, व्यक्ति उत्थान के लिए, सोचना चाहिए। मनुष्य को वह खुला आसमान चाहिए जिस पर वह सोच और कार्य कर सके। देश में आज भी हर बच्चे को पढ़ने की सुविधा नहीं प्राप्त है। सरकारी स्कूलों की स्थिति खराब है। उन्हें सुधारने की बजाए बंद किया जा रहा है। उधर गैर सरकारी स्कूलों की फीस इतनी ज्यादा है कि गरीब परिवारों के बच्चे उधर रुख भी नहीं कर पाते तो दूसरी ओर कोचिंग आज अत्यंत महत्वपूर्ण हो रही है। तो फिर इसमें उलझा व्यक्ति क्या अपने सपनों का आसमान दे पाएगा? देश तो स्वतंत्र है पर देश का हर नागरिक अभी स्वतंत्र नहीं हुआ है।

पहले तो केवल धर्म में ही मतभेद था। आज तो भाई-भाई में भी मतभेद देखने को मिल रहा है। परिवार टूट रहे हैं। आज नवयुवक युवतियाँ शादी भी नहीं करना चाहती। इतनी स्वाधीनता क्या नुकसानदायक नहीं। शादीशुदा परिवार के टूटने के कारण भी बहुत से हैं। महिलाएं परिवार नहीं बढ़ाना चाहती, वे जिम्मेदारी से विमुख हो रही हैं। क्या हम ऐसी स्वाधीनता चाहते थे?

क्या देश का हर नौकरी पेशा व्यक्ति ईमानदारी से अपना कार्य कर रहा है? शिक्षक ईमानदारी से बच्चों को शिक्षा दे रहे हैं? क्या वह योग्य है कि वह जो पढ़ा रहे हैं वह उसके काबिल हैं और क्या वह स्वयं समुचित अध्ययन कर शिक्षा दे रहे हैं? इसके विपरीत वह अपने स्वार्थ पूर्ण इरादे से अपना कार्य कर रहे हैं। कोचिंग कक्षाएं जरूरी हो गई हैं। क्या पहले जरूरत होती थी? यदि नहीं तो आज इसकी आवश्यकता क्यों हो रही है? इसके बाद भी देश में बेरोजगारी बढ़ी हुई है क्योंकि रोजगारमूलक शिक्षा नहीं दी जा रही है।

आज इन सभी विषयों पर विचार करें तो हम पाएंगे कि धन के कारण ही व्यक्ति को यह सब परेशानियों का सामना करना पड़ता है। पैसे के दम पर व्यक्ति दूसरों पर अपना कब्जा करता है तो क्या इस कारण आज का नवयुवक, युवतियाँ पैसे के पीछे भाग रहे हैं? आज पैसा ही सब कुछ मान बैठे हैं। इसी कारण आज परिवार के बच्चे विदेश भाग रहे हैं। पैसा कैसे भी हासिल हो पैसा चाहिए? संतुष्टि जैसी चीज नहीं नजर आती। स्वाधीनता का अर्थ है- अपने को किसी के अधीन नहीं रखना किंतु हम साधनों के अधीन होते जा रहे हैं। हमारा तो मकसद यह नहीं था, किंतु आज हम पैसे के अधीन दिख रहे हैं। ऐसी स्थिति से निजात पाने हेतु शिक्षा व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन की आवश्यकता से इनकार नहीं किया जा सकता। - भोपाल

स्वतंत्रता और हम

डॉ. सुनीता शर्मा

कभी हमारी सबसे बड़ी आकांक्षा थी—हम स्वतंत्र हों। अपनी धरती पर, अपने निर्णयों के साथ, अपने स्वाभिमान के साथ जी सकें। उस स्वप्न को साकार करने के लिए न जाने कितने ज्ञात-अज्ञात वीरों ने अपना वर्तमान ही नहीं, अपना भविष्य भी न्योछावर कर दिया। किसी ने कारावास स्वीकार किया, किसी ने यातनाएँ सहीं, किसी ने घर-परिवार छोड़ा और किसी ने अपने प्राण तक मातृभूमि पर अर्पित कर दिए।

हम स्वतंत्र हुए।

पीढ़ियाँ बदलीं। समय आगे बढ़ा। जो स्वतंत्रता कभी स्वप्न थी, वह हमारे लिए सहज उपलब्ध अधिकार बन गई।

लेकिन इतने वर्षों बाद एक प्रश्न भीतर दस्तक देता है—हम स्वतंत्र तो हो गए, पर क्या हमने स्वतंत्रता के साथ आए अपने उत्तरदायित्व, अपनी जिम्मेदारी और अपने आत्मबोध को भी उतनी ही गंभीरता से समझा?

जिन असंख्य लोगों की कुर्बानियों ने हमें आज का यह उन्मुक्त आकाश दिया, क्या वे हमारी सामूहिक स्मृति में आज भी उसी तरह जीवित हैं? कहीं ऐसा तो नहीं कि स्वतंत्रता का संघर्ष कुछ तिथियों, समारोहों और कुछ परिचित नामों तक सिमटता जा रहा है और अनेक ज्ञात-अज्ञात बलिदानी धीरे-धीरे इतिहास के हाशिये पर चले गए हैं?

हम बचपन से पढ़ते आए हैं—उन्मुक्त गगन के पंछी सोने की सलाखों वाले पिंजरे में भी नहीं रह सकते। पर आज मेरे भीतर एक दूसरा प्रश्न उठता है—

उस सोने के पिंजरे की बात कौन करेगा, जिसे हमने स्वयं अपने लिए तैयार कर लिया है?

आज हमारे पिंजरे की सलाखें हमेशा लोहे की नहीं हैं। कभी वे सुविधा की हैं, कभी उपभोग की, कभी पद और प्रतिष्ठा की, कभी प्रसिद्धि की, कभी सोशल मीडिया पर मिलने वाली स्वीकृति की, कभी जाति-धर्म और विचारधारा के पूर्वाग्रहों की और कभी अपने ही सत्य को अंतिम सत्य मान लेने की जिद की।

विडंबना यह है कि इन सलाखों को हमने स्वयं चुना है। उनकी चमक इतनी आकर्षक है कि कई बार हमें उनका पिंजरा होना दिखाई ही नहीं देता। बाहरी पिंजरा तोड़ना शायद आसान है; भीतर के पिंजरों को पहचानना कहीं कठिन। और यहीं एक दूसरा प्रश्न खड़ा होता है—क्या स्वतंत्रता उच्छृंखलता का नाम है?

क्या स्वतंत्र होने का अर्थ यह है कि मैं जो चाहूँ कहूँ, जैसा चाहूँ व्यवहार करूँ और उसे अपना अधिकार घोषित कर दूँ? क्या अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हमें किसी दूसरे व्यक्ति की गरिमा को आहत करने की स्वतंत्रता भी देती है? क्या असहमति और अपमान एक ही बात हैं?

सोशल मीडिया ने प्रत्येक व्यक्ति को अपनी बात कहने का अभूतपूर्व मंच दिया है। यह स्वतंत्रता की बड़ी उपलब्धि है। लेकिन जब विचार के स्थान पर गाली, असहमति के स्थान पर अपमान, संवाद के स्थान पर चरित्र-हनन और सूचना के स्थान पर बिना जाँचा हुआ असत्य आने लगे, तब हमें स्वयं से पूछना चाहिए—क्या हम स्वतंत्रता का प्रयोग कर रहे हैं या स्वतंत्रता के नाम पर अपने विवेक को पीछे छोड़ रहे हैं?

स्वतंत्रता और उच्छृंखलता के बीच एक महीन किंतु अत्यंत महत्वपूर्ण रेखा है—उत्तरदायित्व की।

अधिकार हमें कुछ करने की स्वतंत्रता देता है, लेकिन आत्मबोध हमें यह समझाता है कि उस स्वतंत्रता का उपयोग कैसे किया जाए। और जिम्मेदारी केवल समझ लेने से पूरी नहीं होती; उसका निर्वहन भी करना पड़ता है।

शायद यही वह बिंदु है जहाँ स्वतंत्रता केवल अधिकार नहीं रहती—वह जीवन-मूल्य बन जाती है।

प्रवासी जीवन ने मुझे इस बात को और भी गहराई से समझाया है।

विदेश में रहते हुए हम बहुत-सी छोटी-छोटी बातों का कितनी सहजता से पालन करने लगते हैं। पैदल यात्री सड़क पार कर रहा हो तो हम वाहन रोक देते हैं। कतार में अपनी बारी की प्रतीक्षा करते हैं। सार्वजनिक स्थान पर कचरा नहीं छोड़ते। कचरे को सामान्य और पुनर्चक्रण योग्य श्रेणियों में बाँटकर सही बिन में डालते हैं। सार्वजनिक संपत्ति को केवल सरकार की नहीं, अपनी संपत्ति समझते

हैं। किसी अनजान व्यक्ति के लिए दरवाज़ा थाम देना, छोटे-से सहयोग पर धन्यवाद कहना, दूसरे के निजी स्थान का सम्मान करना—ये सब धीरे-धीरे हमारे व्यवहार का हिस्सा बन जाते हैं।

ये बातें देखने में बहुत छोटी हैं।

पर क्या सचमुच छोटी हैं?

जब सड़क खाली है और फिर भी मैं पैदल यात्री के लिए रुकती हूँ, जब कोई मुझे देख नहीं रहा और फिर भी मैं कचरा सही बिन में डालती हूँ, जब दंड का भय नहीं है और फिर भी मैं सार्वजनिक नियम का पालन करती हूँ—तब मुझे नियंत्रित कौन कर रहा है?

मेरा अपना विवेक। मेरा आत्मबोध।

कोई बाहरी तंत्र मुझे उस क्षण बाध्य नहीं कर रहा। मेरा अपना 'स्व' मुझे बता रहा है कि मेरी स्वतंत्रता के साथ दूसरे व्यक्ति की स्वतंत्रता भी जुड़ी हुई है।

यहीं स्वतंत्रता का एक गहरा अर्थ मेरे सामने खुलता है।

स्वतंत्रता बाहरी नियंत्रण से मुक्ति अवश्य है, किंतु आत्मबोध से मुक्ति नहीं। बल्कि शायद सच्ची स्वतंत्रता वहीं से आरंभ होती है, जहाँ बाहरी नियंत्रण कम होने लगता है और भीतर का विवेक अधिक जाग्रत होने लगता है।

पर्यावरण के प्रति हमारा व्यवहार भी इसी आत्मबोध की परीक्षा है।

क्या स्वतंत्रता केवल आज को अपनी इच्छानुसार जी लेने का अधिकार है? जिस हवा में मैं साँस लेती हूँ, जिस पानी का उपयोग करती हूँ, जिस धरती के संसाधनों को भोगती हूँ—क्या उन पर केवल मेरा अधिकार है?

नहीं। आने वाली पीढ़ियों का भी उन पर उतना ही अधिकार है।

इसलिए एक छोटी-सी ह्द्गष्4ष्ह्यद्बठ्ठद्द ड्ढद्बठ्ठ भी हमें नागरिकता का बड़ा पाठ पढ़ा सकती है—अधिकार वर्तमान का है तो जिम्मेदारी भविष्य के प्रति भी है।

शायद सभ्य समाज में स्वतंत्रता की पहचान बड़े नारों से कम और छोटे नागरिक व्यवहारों से अधिक होती है।

और प्रवासी होने के कारण स्वतंत्रता के इस अर्थ को मैं शायद और भी गहराई से समझती हूँ।

अपने देश से बाहर निकलते समय हम अपने साथ केवल सामान और पासपोर्ट नहीं लेकर चलते; अनजाने में अपने देश की एक छोटी-सी छवि भी साथ लेकर चलते हैं। हम किसी औपचारिक नियुक्ति के बिना भी अपने देश के सांस्कृतिक प्रतिनिधि—एक प्रकार से उसके अनौपचारिक राजदूत—बन जाते हैं।

तब मेरे भीतर एक सजगता बनी रहती है—मेरा एक आचरण, मेरी स्वतंत्रता का एक असावधान प्रयोग, कहीं मेरे पीछे खड़े पूरे देश, समाज अथवा संस्कृति पर प्रश्नचिह्न न छोड़ जाए।

निश्चय ही किसी एक व्यक्ति का कर्म पूरे राष्ट्र का चरित्र नहीं हो सकता। किसी व्यक्ति की गलती के लिए उसके पूरे देश अथवा समुदाय को उत्तरदायी ठहराना भी उचित नहीं है। लेकिन यथार्थ यह भी है कि विदेश की धरती पर कई बार हमारे नाम के पीछे हमारा देश पढ़ लिया जाता है।

इसलिए यह दुनिया से मेरी अपेक्षा नहीं कि मेरे कर्म का उत्तरदायित्व मेरे राष्ट्र पर डाला जाए; बल्कि स्वयं से मेरी अपेक्षा है कि मेरा आचरण किसी को मेरी मातृभूमि की गरिमा पर उँगली उठाने का अवसर न दे।

प्रवासी होना शायद दो धरतियों के बीच खड़े होकर दोहरे उत्तरदायित्व को जीना भी है—जिस धरती ने मुझे जन्म, भाषा, संस्कृति और संस्कार दिए, उसकी गरिमा का बोध; और जिस धरती ने मुझे स्थान, सुरक्षा और अवसर दिए, उसके नियमों, समाज और संवेदनाओं के प्रति सम्मान।

अपनी मातृभूमि से प्रेम करने के लिए दूसरी धरती को छोटा करना आवश्यक नहीं। बल्कि दूसरी संस्कृति का सम्मान करते हुए अपनी जड़ों को जीवित रखना ही शायद प्रवासी स्वतंत्रता की सबसे सुंदर अभिव्यक्ति है।

सिडनी के ब्ढ्ढभ्ठ्ठस्त्रद्ब ब्ढ्ढद्गड्डष्द्ध की भयावह घटना ने भी मुझे स्वतंत्रता और मानवीय विवेक के इसी प्रश्न के एक अत्यंत गंभीर छोर पर खड़ा किया था। एक शांतिप्रिय, बहुसांस्कृतिक समाज में हुई हिंसा ने विश्वास को झकझोर दिया। लेकिन उसी अँधेरे के बीच एक व्यक्ति अपनी जान की परवाह किए बिना दूसरों की रक्षा के लिए आगे आया।

एक ही समाज। एक ही क्षण। मनुष्य के सामने दो बिल्कुल विपरीत चुनाव।

एक ओर वह मन जो अपने आग्रह अथवा हिंसक विचार को दूसरे मनुष्य के जीवन से बड़ा मान बैठता है; दूसरी ओर वह मन जो किसी अनजान व्यक्ति के जीवन की रक्षा के लिए अपने जीवन को जोखिम में डाल देता है।

तब प्रश्न केवल यह नहीं रह जाता कि हमें कितनी स्वतंत्रता प्राप्त है। प्रश्न यह भी है कि हम अपनी स्वतंत्रता और अपनी निर्णय-क्षमता का उपयोग किसके लिए करते हैं?

विध्वंस के लिए या संरक्षण के लिए?

घृणा के लिए या संवेदना के लिए?

केवल अपने लिए या दूसरे मनुष्य के लिए भी?

स्वतंत्रता हमें चुनाव देती है; विवेक उस चुनाव को मनुष्यता देता है और उत्तरदायित्व उस चुनाव के परिणामों की जिम्मेदारी स्वीकार करना सिखाता है।

शायद यहीं मैं 'स्वतंत्रता' को अपने ढंग से 'स्व + तंत्र' के रूप में पढ़ना चाहती हूँ। यह शब्द की भाषिक व्युत्पत्ति का दावा नहीं, बल्कि स्वतंत्रता को समझने का मेरा एक आत्मिक प्रयास है।

'स्व'—अर्थात् अपने होने का बोध।

और 'तंत्र'—वह आंतरिक व्यवस्था, वह विवेक, वह अनुशासन जो मेरे 'स्व' को संचालित करे।

यदि मुझे नियंत्रित करने के लिए हर समय कोई बाहरी तंत्र आवश्यक है, तो क्या मैंने स्वतंत्रता को वास्तव में आत्मसात किया है?

और यदि मेरा 'स्व' अपने विवेक, आत्मानुशासन और उत्तरदायित्व से स्वयं को संचालित करना सीख गया है, तो शायद स्वतंत्रता मेरे लिए केवल राजनीतिक अवस्था नहीं रही—वह संस्कार बन गई है।

उच्छृंखलता में 'स्व' तो होता है, लेकिन आत्मनियंत्रण का 'तंत्र' खो जाता है।

इसीलिए स्वतंत्रता का उत्सव मनाते हुए मुझे हमारा तिरंगा भी एक प्रश्न की तरह दिखाई देता है।

जब हम झंडा लहराते हैं, तब आखिर हम किसलिए झंडा लहरा रहे होते हैं?

क्या केवल इसलिए कि आज स्वतंत्रता दिवस है?

क्या इसलिए कि एक परंपरा निभानी है?

क्या इसलिए कि एक तस्वीर लेकर अपने उत्सव की घोषणा करनी है?

या उस तिरंगे को हाथ में लेते हुए हमें वे असंख्य बलिदान भी याद आते हैं जिनकी कीमत पर वह स्वतंत्र आकाश में लहरा रहा है?

झंडा केवल यह घोषणा नहीं है कि हम स्वतंत्र हैं।

वह स्वयं से किया गया एक मौन वचन भी है—

हम इस स्वतंत्रता के योग्य आचरण करेंगे।

यदि मैं तिरंगा हाथ में लेकर अपने देश पर गर्व करती हूँ, लेकिन अगले ही क्षण सार्वजनिक स्थान पर कचरा छोड़ देती हूँ; अपने अधिकार के लिए आवाज़ उठाती हूँ लेकिन दूसरे के अधिकार को छोटा समझती हूँ; अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता चाहती हूँ लेकिन असहमति में दूसरे की गरिमा भूल जाती हूँ; प्रकृति से सब कुछ लेना चाहती हूँ लेकिन आने वाली पीढ़ियों के लिए उसे सुरक्षित रखने की जिम्मेदारी नहीं समझती—तो प्रश्न तिरंगे का नहीं, मेरे आत्मबोध का है।

हमने राजनीतिक पराधीनता की बेड़ियाँ तोड़ दीं। लेकिन स्वतंत्रता की यात्रा वहीं समाप्त नहीं हुई।

बाहर की सत्ता से मुक्ति के बाद भीतर की सत्ताओं से मुक्ति की यात्रा आरंभ होती है—अहंकार से, पूर्वाग्रह से, लोभ से, असहिष्णुता से, भीड़ के दबाव से और उस मानसिकता से जो अधिकार तो माँगती है, लेकिन कर्तव्य से बचना चाहती है।

स्वतंत्रता हमें विरासत में मिली है; स्वतंत्र बने रहने की पात्रता हमें अपने आचरण से अर्जित करनी होती है।

आज आवश्यकता केवल यह पूछने की नहीं कि हमारा देश कितना स्वतंत्र है। एक प्रश्न स्वयं से भी पूछा जाना चाहिए—

देश तो स्वतंत्र हो गया, पर क्या हमारा 'स्व' भी स्वतंत्र हुआ?

क्या हम अपने विवेक से सोचते हैं?

क्या असहमति में भी दूसरे की गरिमा बचा पाते हैं?

क्या अधिकारों के साथ अपने कर्तव्यों को याद रखते हैं? क्या जिन बलिदानों पर हमारा आज खड़ा है, उनके प्रति हमारी स्मृति जीवित है?

क्या अपने छोटे-छोटे नागरिक व्यवहारों में भी हम स्वतंत्रता का सम्मान करते हैं?

और क्या हम अपनी जिम्मेदारियों का निर्वहन उसी निष्ठा से करते हैं, जिस दृढ़ता से अपने अधिकारों की माँग करते हैं? शायद स्वतंत्रता केवल पिंजरे का द्वार खुल जाने का नाम नहीं है।

स्वतंत्रता उस खुले द्वार के सामने खड़े होकर यह जानने का नाम भी है कि हमें उड़ना कहाँ है, क्यों उड़ना है और हमारी उड़ान से किसी दूसरे के पंख न टूटें।

झंडा हवा से लहरता है, लेकिन उसका अर्थ हमारे आचरण से जीवित रहता है। स्वतंत्रता का उत्सव वर्ष में एक दिन मनाया जा सकता है, किंतु स्वतंत्रता का निर्वहन हमें प्रतिदिन अपने आत्मबोध, विवेक और उत्तरदायित्व के साथ करना होता है। क्योंकि स्वतंत्रता केवल अधिकार की प्राप्ति नहीं—उस अधिकार से जुड़ी जिम्मेदारी का सजग और विवेकपूर्ण निर्वहन भी है। -ऑस्ट्रेलिया/न्यूज़ीलैंड

आजादी और चेतना जागृति

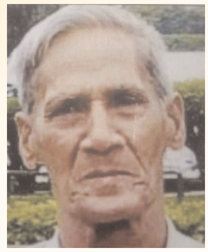

सतीश चंद्र 'सतीश'

१५ अगस्त को हम फिर अपना मुक्ति पर्व मना रहे हैं। हमारे राष्ट्र की सांस्कृतिक परंपरा ही पर्व प्रधान है। विविध संस्कृतियों के संगम से बनी हमारी सांस्कृतिक विरासत दुनिया के किसी भी अन्य भूभाग से ज्यादा विविधतापूर्ण और समृद्ध है।

सदियों से इस उर्वर भूमि ने दूर-दूर के मानव समुदायों को आकर्षित किया। उन्हें अपने में समाहित कर निर्बाध विकास का मौका दिया। कोई भी समूह अपने मूल रूप में नहीं रह पाया। सामाजिक अंत:क्रिया ने कुछ लिया, कुछ दिया। इस तरह हमारा सांस्कृतिक उपवन नए रंगों और सुगंधों वाले फूलों से सजता रहा।

यह संभव हुआ हमारी स्वतंत्र चेतना से। हर सुंदर सत्य को उदारता से स्वीकार किया। जो बाहरी लोग स्वजन बनकर निष्छल भाव से रहना चाहते थे, उन्हें हमने अपना लिया। अतीत के बिखरे समुदाय 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' के लक्ष्य के साथ जुड़कर वही समाज बने, जिसे आज हम गर्व से भारतीय समाज कहते हैं।

इसी समाज ने ढाई सदी पहले आए ब्रिटिश शोषकों के साम्राज्य से मुक्ति युद्ध में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। सभी ने खुले दिल से शहादतें दीं। १५ अगस्त १९४७ को अभूतपूर्व स्वतंत्रता मिली। यह दुनिया के अन्य स्वातंर्त्य युद्धों से इसलिए अलग थी कि विदेशी ही नहीं, देशी सामंतवाद से भी एक साथ मुक्ति मिली।

परिणामस्वरूप सदियों से जकड़ी जंजीरें चटखकर धूल हो गईं। ऊंच-नीच का सामाजिक भेदभाव खत्म करने की स्वतंत्रता मिली। 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' जो कुछ वर्गों तक सीमित था, अब सबके लिए खुल गया। नारी के लिए घर की देहरी वाली लक्ष्मण रेखा मिट गई। राजसत्ता की आलोचना पर लगे ताले टूटे। श्रमिक वर्ग को संपत्ति से वंचित रखने वाली नीति खत्म हुई। सबको प्रतिभा निखारने का समान अवसर देने की जिम्मेदारी राजसत्ता को सौंपी गई। मनुष्य-मनुष्य और समुदाय-समुदाय के बीच घृणा फैलाने वाले कृत्यों को अपराध घोषित किया गया।

इसलिए १५ अगस्त सिर्फ स्वतंत्रता दिवस का स्मृति समारोह नहीं है। यह चेतना जागृति दिवस भी है। साल में कम से कम एक दिन गंभीरता से सोचें कि १९४७ में जिन लक्ष्यों के लिए आजादी हासिल की थी, जिन सपनों के लिए पूर्वजों ने प्राण दिए थे, उन लक्ष्यों को हम कितना पूरा कर पाए हैं। कितना आगे बढ़े हैं या कब-कब बाधाएं आईं। कहीं विकास के छद्म शत्रुओं ने राह में गहरी खाइयां तो नहीं खोद दीं, जिनमें गिरकर आने वाली पीढ़ियों का समय बर्बाद न हो जाए। राजसत्ता के नायक ऊंचे मंचों पर खड़े होकर जनहित के कामों का बखान करेंगे। अरबों-खरबों रुपये खर्च के आंकड़े सुनाएंगे। तिरंगा घर-घर फहराने का निर्देश देंगे। शासक वर्ग के लिए जनकोष का भंडार उत्सव मनाने के लिए उपलब्ध है।

आजादी जनकोष का मनमाना उपयोग कर अपनी छवि चमकाने के लिए नहीं मिली। जनता को सोचना होगा कि आजादी का मुख्य उद्देश्य विकास के लक्ष्यों को हासिल कर आगे बढ़ना है। क्या उन लक्ष्यों की ओर बढ़ने की स्थिति सकारात्मक है या राह रुक गई है और पीछे धकेल रही है। विकास को सिर्फ शासकों की इच्छा पर नहीं छोड़ना है। जनता को जागरूक रहकर सर्वांगीण विकास के लिए राजसत्ता को बाध्य करने वाले संघर्षों के लिए तैयार रहना होगा। तभी स्वतंत्रता मजबूत रहेगी और हम अपने समय की दुनिया के साथ कदम मिलाकर आगे बढ़ सकेंगे।

–फर्रुखाबाद

अवश्यंभावी है स्वतंत्र चिंतन

शशिकांत गुप्ते

प्रतिवर्षानुसार बहुत सी जगह स्वतंत्रता दिवस औपचारिकता रूप में संपन्न किया गया। परंपरागत देशभक्ति के लिए लिखें फिल्मी और गैरफिल्मी गीत सार्वजनिक स्थानों पर लाउडस्पीकर के माध्यम से बहुत ही द्यश्हह्वस्र मतलब कर्कश आवाज़ में बजाए गए। कर्कश आवाज का अर्थ कर्ण भेदी आवाज़ में बजाए जातें हैं।

कुछ विघ्नसंतोषी लोगों ने शिकायत की है कि राष्ट्र गीत तेज आवाज़ में बजाने से ध्वनि प्रदूषण होता है? ध्वनि प्रदूषण की शिकायत करने वालें यह भूल जातें हैं कि यह कर्णभेदी आवाज़ नहीं है यह देश प्रेम का मापदंड है? गणेशोत्सव, जन्माष्टमी,नवरात्रि,शिवरात्रि,होली,आदि ऐसे अनेक धार्मिक आयोजनों में भी लाउडस्पीकर की जितनी तेज आवाज़ होगी उतनी धार्मिकता प्रमाणित होगी?

धार्मिकता एक ऐसा कवच है,जो देश के सारे कायदे और कानूनों को बेख़ौफ़ होकर तोड़ने के लिए ढाल बन जाता है? बहरहाल हम चर्चा कर रहें हैं। स्वतंत्रता दिवस की हमारे अंदर वर्ष में दो दिन देश प्रेम की भावना जागती है। एक १५ अगस्त और दूसरा २६ जनवरी के दिन।

इन दोनों राष्ट्रीय उत्सवों का इंतजार वे लोग ज्यादा करते हैं जो इस फ़िराक में रहतें हैं कि इन दोनों दिनों के आसपास के कितने दिनों का अवकाश प्राप्त होगा ताकि हम सपरिवार कहीं तफरी करने निकल सकें?

वैसे भी अपने देश को आज़ाद होकर ही सिर्फ दस या बारह वर्ष हुए है, ऐसा कुछ स्वामी भक्ति में लीन निर्वाचित जन प्रतिनिधि के द्वारा दिया गया ऑफिशियल वक्तव्य है, कि हमें स्वतंत्रता सन २०१४ में मिली है।

स्वामीभक्ति की दौड़ में अव्वल नंबर प्राप्त करने के लिए स्वामीभक्त ऐसे बयान देकर अपनी स्वामीभक्ति की तस्दीक तो कर लेते हैं,लेकिन स्वतंत्रता संग्राम में जिन देशभक्तों ने अपनी कुर्बानियां दी,जिन्होंने यातनाएं झेली,जो जेल गए उनकी तो अवहेलना भी की जाती है।

स्वामी भक्ति में लीन यह भी भूल जातें कि जिस स्वामी की भक्ति कर रहें है,उसकी विचारधारा के पुरखों ने स्वतंत्रता संग्राम में अपना नाखून तक नहीं कटाया,उल्टा फिरंगियों के साथ गलबहियों की है।

जो भी अपना देश सन १९४७ को स्वतंत्र हुआ यह शाश्वत सत्य है। अब हम स्वतंत्र देश के स्वतंत्र नागरिक है।

हम देश से बड़ा धर्म को मानने लगे हैं।

इसलिए हम स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास को पढ़ने समझने में और जानने में रुचि कम रखतें हैं और धार्मिक आयोजनों को भव्य स्वरूप में सम्पन्न करते रहतें हैं। यह गलत भी नहीं है,धार्मिक आयोजनों से हमें धर्म को समझने में आसानी होगी। यदि हम सही मायने में धर्म को समझने की कोशिश करेंगे तो हमारे आचरण में शुद्धता आएगी। हम ऊंच-नीच,जात-पात, गरीब अमीर के भेदभाव से मुक्त होंगे। यदि ऐसा हुआ तो हम मुमुक्षु बनेंगे? मुमुक्ष मतलब मोक्ष प्राप्त करने के अभिलाषी बनेंगे?

धर्म के मर्म को हम सूक्ष्मता से समझने की कोशिश करेंगे तो हमारे अंतर्मन में मानवता जागेगी। मानवता जागृत होने पर सभी प्राणियों से हम प्रेमभाव रखेंगे। संतों के कथन को अंगीकृत करने के प्रयास में रहेंगे।

संतों ने कहा है कि जिस किसी प्राणी में जान है उसने ईश्वर का वास है। यह सूक्ति आत्मसात करने पर हम हिंसा से भी मुक्त हो जाएंगे। कट्टरता को त्याग देंगे। आडम्बर को उतार कर फेंक देंगे। हमारे अंतर्मन में लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता जागृत होगी। तब हम स्वतंत्रता के महत्व को यथार्थ में समझ सकेंगे।

विचार भिन्नता तो स्वाभाविक है और असहमति लोकतंत्र की बुनियाद है यह बुनियादी सोच हमारे अंदर पैठ कर जाएगा। ऐसा हो तब सिर्फ उम्मीद ही नहीं पूर्ण विश्वास है जो निम्न पंक्तियों में बयां होता है-

वो सुब्ह कभी तो आएगी
इन काली सदियों के सर से
जब रात आँचल ढलकेगा
जब दु:ख के बादल पिघलेंगे
जब सुख का सागर छलकेगा
जब अम्बर झूम के नाचेगा
जब धरती नगमे गाएगी
बात निकलती है तो
कहां से कहां तक जाती है।

-इंदौर

आत्ममंथन का समय: स्वाधीनता और हम

मनोज चतुर्वेदी 'आनंद'

स्वाधीनता और लोकतंत्र किसी भी राष्ट्र की आत्मा हैं। स्वाधीनता व्यक्ति को स्वतंत्र चिंतन, अभिव्यक्ति और गरिमापूर्ण जीवन का अधिकार देती है, वहीं लोकतंत्र जनता को अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन संचालन में सहभागी बनाता है।

भारत ने स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद लोकतांत्रिक व्यवस्था को अपनाकर विश्व के समक्ष एक सशक्त उदाहरण प्रस्तुत किया। समय के साथ देश ने अनेक क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति भी की, किंतु आज आवश्यकता इस बात पर गंभीर आत्ममंथन की है कि क्या हम स्वाधीनता और लोकतंत्र की मूल भावना को उसी प्रतिबद्धता के साथ जी पा रहे हैं, जिसकी कल्पना हमारे स्वतंत्रता सेनानियों और संविधान निर्माताओं ने की थी।

आज व्यक्ति की स्वतंत्रता अनेक स्तरों पर प्रभावित होती दिखाई देती है। परिवार और समाज में संवाद, सहिष्णुता और परस्पर सम्मान का स्थान धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। अधिकारों के प्रति जागरूकता लोकतंत्र की शक्ति है, किंतु जब अधिकारों का प्रयोग दूसरों की स्वतंत्रता का अतिक्रमण करने लगे, तब स्वाधीनता का वास्तविक अर्थ कमजोर पड़ जाता है। स्वतंत्रता केवल अपने अधिकारों की रक्षा का नाम नहीं, बल्कि दूसरों के अधिकारों के सम्मान का भी दायित्व है।

संचार क्रांति ने मानव जीवन को नई गति दी है। मोबाइल, इंटरनेट और सोशल मीडिया ने ज्ञान और संवाद के अनगिनत अवसर उपलब्ध कराए हैं, लेकिन इसके साथ एक नई चुनौती भी सामने आई है। अनेक लोग स्वतंत्र चिंतन के स्थान पर सोशल मीडिया की प्रवृत्तियों और भीड़ की मानसिकता से प्रभावित होकर निर्णय लेने लगे हैं। पहले व्यक्ति स्वयं विचार करता था, विभिन्न पक्षों को समझता था और विवेकपूर्ण निर्णय तक पहुँचता था। आज सूचना की अधिकता के बीच स्वतंत्र विचार की क्षमता को बचाए रखना पहले से अधिक आवश्यक हो गया है।

लोकतंत्र की सफलता केवल चुनाव कराने से सुनिश्चित नहीं होती। उसका वास्तविक आधार जागरूक मतदाता और उत्तरदायी जनप्रतिनिधि होते हैं। लोकतंत्र की मूल भावना यह है कि जनता अपने प्रतिनिधियों का चयन राष्ट्रहित, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, सुशासन और विकास जैसे मुद्दों के आधार पर करे। किंतु अनेक अवसरों पर चुनावी विमर्श इन मूल प्रश्नों से भटककर धनबल, जातीय समीकरण, धार्मिक ध्रुवीकरण और तात्कालिक लाभों तक सीमित होता दिखाई देता है। यह प्रवृत्ति लोकतंत्र की गुणवत्ता को प्रभावित करती है।

किसी भी राष्ट्र का भविष्य उसकी शिक्षा और न्याय व्यवस्था पर निर्भर करता है। यदि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और सुलभ न्याय आम नागरिक की पहुँच से दूर हो जाएँ, तो सामाजिक असमानता बढ़ना स्वाभाविक है। शिक्षा केवल रोजगार का माध्यम नहीं, बल्कि जागरूक नागरिक तैयार करने का आधार है। इसी प्रकार न्याय में विलंब या न्याय तक पहुँच की कठिनाई लोकतंत्र के प्रति जनता के विश्वास को कमजोर करती है। इसलिए शिक्षा और न्याय दोनों को समान अवसर के सिद्धांत पर आधारित बनाना समय की आवश्यकता है।

जनप्रतिनिधियों से अपेक्षा होती है कि वे जनता की आकांक्षाओं के अनुरूप कार्य करें। लोकतंत्र में सत्ता सेवा का माध्यम होनी चाहिए, विशेषाधिकार का नहीं। दुर्भाग्यवश अनेक बार यह अनुभव होता है कि सत्ता प्राप्त होने के बाद प्राथमिकताएँ बदल जाती हैं और आम नागरिकों की मूल समस्याएँ पीछे छूट जाती हैं। सड़क सुरक्षा, महिलाओं और बच्चों की सुरक्षा, भ्रष्टाचार पर नियंत्रण, स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार तथा रोजगार जैसे मुद्दे आज भी व्यापक समाधान की प्रतीक्षा कर रहे हैं। भाषणों और घोषणाओं से अधिक महत्त्वपूर्ण उनके धरातलीय परिणाम होते हैं।

पर्यावरण का प्रश्न भी आज लोकतंत्र और विकास की बहस का अभिन्न हिस्सा बन चुका है। अंधाधुंध वनों की कटाई, जल स्रोतों का दोहन और प्राकृतिक संसाधनों का असंतुलित उपयोग जलवायु परिवर्तन को बढ़ा रहे हैं। अनियमित वर्षा, बढ़ता

तापमान और मौसम की असामान्य परिस्थितियाँ हमें चेतावनी दे रही हैं कि विकास और प्रकृति के बीच संतुलन बनाए बिना भविष्य सुरक्षित नहीं हो सकता।

लोकतंत्र केवल जनता की जिम्मेदारी नहीं, बल्कि शासन और प्रशासन की भी समान जवाबदेही है। पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और भ्रष्टाचार पर प्रभावी नियंत्रण लोकतंत्र की मजबूती के लिए अनिवार्य हैं। जनता को सूचना प्राप्त करने का अधिकार है और शासन का दायित्व है कि वह समयबद्ध, ईमानदार और संवेदनशील तरीके से अपनी जिम्मेदारियों का निर्वहन करे। लोकतंत्र में विश्वास तभी मजबूत होता है जब सरकार और नागरिकों के बीच पारस्परिक भरोसा बना रहे।

आज आवश्यकता राजनीतिक मतभेदों से ऊपर उठकर राष्ट्रीय हित को सर्वोच्च प्राथमिकता देने की है। जाति, भाषा और धर्म के आधार पर समाज को विभाजित करने वाली प्रवृत्तियाँ लोकतंत्र को कमजोर करती हैं, जबकि सामाजिक समरसता, संवैधानिक मूल्यों का सम्मान और राष्ट्रीय एकता उसे सशक्त बनाते हैं। भारत का भविष्य तभी उज्ज्वल होगा जब प्रत्येक नागरिक स्वतंत्र चिंतन, नैतिक आचरण और संवैधानिक मूल्यों के प्रति प्रतिबद्ध रहेगा। लोकतंत्र तभी सार्थक होगा जब शासन पारदर्शी हो, न्याय सबके लिए समान हो, शिक्षा सबकी पहुँच में हो, पर्यावरण सुरक्षित रहे और विकास का लाभ समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुँचे।

स्वाधीनता और लोकतंत्र हमें विरासत में अवश्य मिले हैं, किंतु उन्हें सशक्त बनाए रखना हमारी सामूहिक जिम्मेदारी है। यदि नागरिक, समाज और शासन मिलकर इस दिशा में ईमानदारी से प्रयास करें, तो भारत न केवल आर्थिक रूप से, बल्कि नैतिक, सामाजिक और लोकतांत्रिक दृष्टि से भी विश्व के लिए एक आदर्श राष्ट्र बन सकता है। यही स्वतंत्र भारत के प्रति हमारी सच्ची जिम्मेदारी होगी व स्वतंत्र भारत के उद्देश्य की कल्पना को भी साकार किया जा सकेगा।

-भोपाल

अधिकार तुम्हारा है

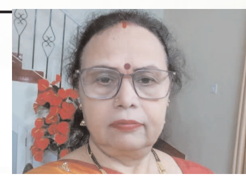

शशि प्रभा शाक्य 'शशि'

भारत के वीरों अब सुन लो,
यह देश हमारा है।
इस भूमि के कण -कण पर,
अधिकार तुम्हारा है ।।

जिस दिन जन्म लिया था हमने,
कसम यही तो खाई थी ।
मातृभूमि यह सदा हमारी,
यह मान हमारा है।।

भारत भूमि की रक्षा में,
हम प्राण गवाएँगे ।
इस पर आँच न आने देंगे,
यह वचन हमारा है ।।

इसकी सुषमा रंग रंगीली,
स्वर्ण भूमि यह प्यारी है ।
हमारी संस्कृति इंद्रधनुष सी,
यह गर्व हमारा है ।।

जाति -पाति हम नहीं मानते,
हम सब भारतवासी हैं ।
भाषा सबकी अलग-अलग है,
पर एक ही नारा है ।।

खान-पान के विविध रूप हैं,
पहनावा भी अनुपम है।
मन में हम सब एक वृक्ष के,
हर फूल भी प्यारा है ।।

हमको अलग कौन कर सकता,
हम सदा ही हैं तैयार ।
मातृभूमि की सेवा में रत,
यह अरमान हमारा है ।।

देश के गद्दारों को हमने,
खुली चुनौती दे दी है ।
अपनी हरकत छोड़ दो तुम,
यदि प्राण प्यारा है ।।

दुश्मन से तुम मिल जाते हो,
साथ उसी का देते हो ।
उल्टा लटका देंगे तुमको,
यह वचन हमारा है ।।

-अवधपुरी, भोपाल

लोकतंत्र और हम

लोकतंत्र केवल एक शासन व्यवस्था नहीं, बल्कि जीवन जीने की ऐसी पद्धति है जिसमें प्रत्येक नागरिक को समान अधिकार, सम्मान और अपनी बात कहने की स्वतंत्रता प्राप्त होती है। भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है, जहाँ जनता अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करके शासन चलाने का अधिकार देती है। इसलिए लोकतंत्र की सफलता केवल सरकार पर नहीं, बल्कि हम सभी नागरिकों की जागरूकता और जिम्मेदारी पर भी निर्भर करती है।

एक सशक्त लोकतंत्र के लिए आवश्यक है कि हम अपने अधिकारों के साथ-साथ अपने कर्तव्यों का भी ईमानदारी से पालन करें। मतदान करना, कानून का सम्मान करना, सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा करना, सामाजिक सद्भाव बनाए रखना तथा देश के विकास में अपना योगदान देना प्रत्येक नागरिक का दायित्व है। जाति, धर्म, भाषा और क्षेत्र के आधार पर भेदभाव करने के बजाय हमें राष्ट्रीय एकता और भाईचारे की भावना को बढ़ावा देना चाहिए।

आज के समय में लोकतंत्र के सामने अनेक चुनौतियाँ हैं, जैसे भ्रष्टाचार, असहिष्णुता, फर्जी सूचनाएँ और सामाजिक विभाजन। इन चुनौतियों का सामना केवल जागरूक, शिक्षित और जिम्मेदार नागरिक ही कर सकते हैं। यदि हम सत्य, नैतिकता और संविधान के मूल्यों का पालन करें, तो लोकतंत्र और अधिक मजबूत बनेगा। अंततः, लोकतंत्र की वास्तविक शक्ति जनता में निहित होती है। जब हम अपने अधिकारों का विवेकपूर्ण उपयोग करते हुए अपने कर्तव्यों का निष्ठापूर्वक निर्वहन करते हैं, तभी लोकतंत्र सशक्त, समृद्ध और सफल बनता है।

लोकतंत्र की शान

सूफ़िया ज़ैदी

लोकतंत्र की शान तभी, जब जागे हर इंसान,
अधिकारों के साथ निभाए, अपने सारे कर्तव्य महान।

मत की शक्ति सबसे बढ़कर, इसका रखना मान,
सत्य, न्याय और प्रेम से ही बनता देश महान।

जाति-धर्म की दीवारों से ऊपर उठकर चलें,
मिल-जुलकर हम भारत माँ का उज्ज्वल भविष्य गढ़ें।

जन-जन की आवाज़ में ही बसती इसकी जान,
लोकतंत्र का दीप जलाएँ, यही हमारा अभियान।

-सहारनपुर (उत्तर प्रदेश)

राष्ट्रीय गौरव और हम

वल्लभ किशोर शर्मा

१५ अगस्त हमारे राष्ट्रीय जीवन का सबसे गौरवपूर्ण और पावन दिवस है। यह केवल एक तिथि नहीं, बल्कि उस महान संघर्ष की स्मृति है जिसमें अनगिनत स्वतंत्रता सेनानियों ने अपनी जान की बाज़ी लगाकर देश को गुलामी की जंजीरों से मुक्त कराया। यह पर्व राष्ट्रीय एकता के सूत्र में पूरे भारत को बाँधने वाला उत्सव है और साथ ही उन वीर शहीदों को नमन करने, उनके इतिहास को समझने तथा उनके प्रति गहन श्रद्धा व्यक्त करने का अवसर भी।

१५ अगस्त १९४७ को भारत ने सदियों की पराधीनता से मुक्त होकर स्वतंत्रता का सूर्योदय देखा। उस दिन लाल किले की प्राचीर से तिरंगा फहराया गया और देशवासियों के हृदय में एक नए युग का आरंभ हुआ। यह स्वतंत्रता किसी एक व्यक्ति या वर्ग की देन नहीं थी। यह महात्मा गांधी के अहिंसक सत्याग्रह, सुभाष चंद्र बोस की आज़ाद हिंद फौज, भगत सिंह, चंद्रशेखर आज़ाद, रामप्रसाद बिस्मिल जैसे क्रांतिकारियों के बलिदान, रानी लक्ष्मीबाई, झाँसी की वीरांगनाओं, नेताजी सुभाष, बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय, सरदार पटेल और अनगिनत अज्ञात वीरों के त्याग का सामूहिक फल था।

इन सेनानियों ने न केवल विदेशी शासन के विरुद्ध संघर्ष किया, बल्कि देश को एक सूत्र में बाँधने का भी प्रयास किया। उनकी दृष्टि में भारत केवल एक भौगोलिक इकाई नहीं, बल्कि विविधता में एकता का जीवंत प्रतीक था।

स्वतंत्रता दिवस हमें याद दिलाता है कि भारत की वास्तविक शक्ति उसकी एकता में निहित है। उत्तर से दक्षिण, पूर्व से पश्चिम तक फैले इस विशाल देश में भाषा, धर्म, संस्कृति और परंपराओं की विविधता होते हुए भी हम सब एक तिरंगे के नीचे खड़े हैं। यह पर्व हमें सिखाता है कि स्वतंत्रता की रक्षा तभी संभव है जब हम क्षेत्रीय, भाषाई या सांप्रदायिक भेदभाव से ऊपर उठकर राष्ट्रीय हित को सर्वोपरि रखें।

लाल किले से प्रधानमंत्री का संबोधन, देशभर में तिरंगे का फहराना, परेड, सांस्कृतिक कार्यक्रम और बच्चों द्वारा देशभक्ति गीतों का गायन—ये सभी गतिविधियाँ एक ही संदेश देती हैं- हम एक हैं, हम अखंड हैं।

स्वतंत्रता सेनानियों को नमन और इतिहास की समझ

यह दिवस केवल उत्सव मनाने का नहीं, बल्कि इतिहास को समझने और श्रद्धांजलि अर्पित करने का भी है। हमें उन सेनानियों के जीवन और संघर्ष को पढ़ना, समझना और नई पीढ़ी तक पहुँचाना चाहिए। भगत सिंह की क्रांतिकारी विचारधारा, गांधी जी का सत्य और अहिंसा का मार्ग, नेताजी की दिल्ली चलो की पुकार, सरदार पटेल का अखंड भारत का स्वप्न—ये सभी हमें आज भी मार्गदर्शन देते हैं।

जब हम स्वतंत्रता सेनानियों को नमन करते हैं, तो हम केवल उनके बलिदान का स्मरण नहीं करते, बल्कि उनके आदर्शों को अपने जीवन में उतारने का संकल्प भी लेते हैं। उनकी कहानियाँ हमें सिखाती हैं कि स्वतंत्रता कोई उपहार नहीं, बल्कि निरंतर जिम्मेदारी है।

आज की चुनौतियाँ और हमारा कर्तव्य

आज जब देश स्वतंत्रता के इतने वर्ष पूरे कर चुका है, तब भी हमें सतर्क रहना होगा। राष्ट्रीय एकता को कमजोर करने वाले तत्व, आंतरिक विभेद और बाहरी चुनौतियाँ अभी भी मौजूद हैं। स्वतंत्रता दिवस हमें याद दिलाता है कि सच्ची आज़ादी तभी सार्थक है जब हर नागरिक को न्याय, समानता और गरिमापूर्ण जीवन मिले।

हमें शिक्षा, स्वास्थ्य, वैज्ञानिक प्रगति और सामाजिक समरसता के क्षेत्र में आगे बढ़ते हुए उन आदर्शों को जीवित रखना है, जिनके लिए स्वतंत्रता सेनानियों ने अपना सर्वस्व न्योछावर किया।

१५ अगस्त केवल एक राष्ट्रीय अवकाश नहीं, बल्कि हमारे सामूहिक गौरव, एकता और कृतज्ञता का दिवस है। आइए, इस पावन अवसर पर हम सब तिरंगे के सामने खड़े होकर संकल्प लें कि हम स्वतंत्रता सेनानियों के बलिदान को कभी व्यर्थ नहीं होने देंगे। हम राष्ट्रीय एकता के सूत्र को और मजबूत करेंगे, इतिहास से प्रेरणा लेंगे और आने वाली पीढ़ियों के लिए एक सशक्त, समृद्ध और अखंड भारत का निर्माण करेंगे।

जय हिंद! वंदे मातरम!

इंकलाब जिंदाबाद

–नरसिंहगढ़

स्वाधीनता और हमारा दायित्व

सरिता गर्ग 'सरि'

कभी-कभी इतिहास हमारे दरवाज़े पर दस्तक देता है और हम उसे केवल एक तारीख समझकर कैलेंडर के पन्ने पर टाँग देते हैं। पंद्रह अगस्त भी हमारे लिए ऐसी ही एक तारीख बन जाने का खतरा रखता है। हर वर्ष तिरंगा आकाश में लहराता है, राष्ट्रगान की धुन वातावरण में गूँजती है और हम गर्व से कहते हैं—हम स्वतंत्र हैं। लेकिन मन के किसी शांत कोने में एक प्रश्न धीरे से उठता है—

क्या सचमुच हम स्वतंत्र हैं? देश की सीमाएँ स्वतंत्र हैं, सत्ता अपने हाथों में है, निर्णय लेने का अधिकार हमारा है। पर स्वतंत्रता का एक संसार बाहर है और एक भीतर। बाहर की बेड़ियाँ टूट जाएँ तो राष्ट्र स्वतंत्र हो जाता है, लेकिन भीतर की बेड़ियाँ बनी रहें तो मनुष्य कहाँ स्वतंत्र हो पाता है?

हमारे पूर्वजों ने जिस स्वतंत्रता के लिए अपने सुख छोड़े, अपने परिवार छोड़े, जेलें सहीं और हँसते-हँसते अपने प्राण तक न्योछावर कर दिए, वह स्वतंत्रता केवल शासन बदलने का नाम नहीं थी। उनके स्वप्न में एक ऐसा भारत था जहाँ मनुष्य अपने सम्मान के साथ जी सके, जहाँ किसी की आवाज़ उसकी जाति, गरीबी, लिंग या परिस्थिति के कारण दबा न दी जाए। उन्होंने हमें केवल एक स्वतंत्र देश नहीं दिया—उन्होंने हमें एकजिम्मेदारी सौंपी थी।

आज जब हम स्वतंत्रता की वर्षगाँठ मनाते हैं, तो हमें स्वयं से पूछना चाहिए कि उस जिम्मेदारी को हमने कितना निभाया है। हम अधिकारों की बात बहुत सहजता से करते हैं। हमें शिक्षा चाहिए, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता चाहिए, समान अवसर चाहिए, सम्मान चाहिए। और निश्चय ही ये हमारे अधिकार हैं। लेकिन क्या हमने कभी उतनी ही गंभीरता से अपने कर्तव्यों के बारे में सोचा है?

हम चाहते हैं कि सड़कें स्वच्छ रहें, लेकिन कूड़ा उठाकर सड़क के किनारे डालने में हमें संकोच नहीं होता।

हम व्यवस्था में ईमानदारी चाहते हैं, लेकिन अपने छोटे-से लाभ के लिए नियम तोड़ने को गलत नहीं मानते। हम देश को बदलना चाहते हैं, लेकिन अपने भीतर के छोटे-से स्वार्थ को बदलने के लिए तैयार नहीं होते।

शायद यहीं हमारी स्वतंत्रता कहीं कमजोर पड़ जाती है। स्वतंत्रता का अर्थ यह नहीं कि मैं जो चाहूँ, वह करूँ।स्वतंत्रता का अर्थ यह है कि मैं जो करूँ, उसमें दूसरे के अधिकार और सम्मान को भी स्थान दूँ।

हमारे समय की गुलामी का चेहरा बदल गया है। आज कोई विदेशी शासन हमारी सोच पर पहरा नहीं बैठाता, लेकिन पूर्वाग्रह अब भी हमारी सोच के दरवाज़े बंद कर देते हैं। भय अब भी कई आवाज़ों को मौन कर देता है। रूढ़ियाँ अब भी कई सपनों के पंख काट देती हैं।

विशेषकर नारी की स्वतंत्रता का प्रश्न हमें भीतर तक देखने के लिए विवश करता है। क्या बेटी को अपने जीवन का निर्णय लेने का अधिकार है? क्या स्त्री को अपनी पहचान केवल किसी रिश्ते के नाम से बाहर भी मिलती है? क्या उसकी प्रतिभा को अवसर मिलता है या उससे पहले उसकी सीमाएँ तय कर दी जाती हैं? जिस दिन किसी स्त्री को अपने सपने देखने के लिए किसी से अनुमति नहीं माँगनी पड़ेगी, उस दिन स्वतंत्रता का अर्थ और विस्तृत होगा और यही बात समाज के हर उस व्यक्ति पर लागू होती है जिसकी आवाज़ कमजोर समझकर दबा दी जाती है।

स्वाधीन भारत की अगली लड़ाई शायद सीमा पर नहीं, हमारे भीतर है।हमें लड़ना है अज्ञान से। लड़ना है भ्रष्टाचार से। लड़ना है भेदभाव से।

लड़ना है उस संवेदनहीनता से, जिसमें किसी दूसरे का दु:ख हमें छूता ही नहीं।

हमें यह भी याद रखना होगा कि राष्ट्र केवल संसद में नहीं बसता। वह उस किसान की मिट्टी में बसता है जो अन्न उगाता है, उस सैनिक की आँखों में बसता है जो सीमा पर जागता है, उस शिक्षक की आवाज़ में बसता है जो किसी बच्चे के भविष्य को आकार देता है और उस माँ की प्रार्थना में भी बसता है जो अपने बच्चे को अच्छा इंसान बनने की सीख देती है। इसलिए देश के प्रति हमारा सबसे बड़ा योगदान शायद यही है कि हम अच्छे नागरिक होने से पहले अच्छे मनुष्य बनें। क्योंकि जिस दिन मनुष्य के भीतर करुणा मर जाती है, उस दिन राष्ट्र की प्रगति भी अधूरी हो जाती है।

आज हमारे पास विज्ञान है, तकनीक है, तेज़ी से बदलती दुनिया है। लेकिन इस दौड़ में हमें यह नहीं

भूलना चाहिए कि मनुष्य की सबसे बड़ी उपलब्धि मशीन बनाना नहीं, मनुष्य बने रहना है। स्वतंत्रता का उत्सव केवल झंडे को सलाम करने में नहीं, उस हाथ को थामने में भी है जो गिर गया है। यह केवल राष्ट्रगान गाने में नहीं, उस देश की पीड़ा सुनने में भी है जिसे हम अपना कहते हैं।यह केवल शहीदों को याद करने में नहीं, उनके सपनों को अपने आचरण में जीवित रखने में है। हर पीढ़ी को स्वतंत्रता विरासत में मिलती है, लेकिन हर पीढ़ी को उसकी रक्षा अपने कर्मों से करनी पड़ती है।

हमारे पूर्वजों ने हमें आज़ाद भारत दिया था। अब हमारी बारी है। हम आने वाली पीढ़ी को कैसा भारत देंगे—यह प्रश्न इतिहास हमसे पूछेगा।

ऐसा भारत, जहाँ विकास हो लेकिन संवेदना न हो—या ऐसा भारत जहाँ प्रगति के साथ मनुष्यता भी आगे बढ़े? ऐसा भारत, जहाँ स्वतंत्रता केवल संविधान के पन्नों पर लिखी हो—या ऐसा भारत जहाँ वह हर व्यक्ति के जीवन में साँस लेती हुई दिखाई दे? शायद स्वाधीनता का सबसे सुंदर अर्थ यही है—देश को आज़ाद करना एक पीढ़ी का महान संघर्ष था,लेकिन उस आज़ादी को सार्थक बनाना हर पीढ़ी की सतत साधना है। इसलिए इस बार जब तिरंगा आकाश में लहराए, तो हम केवल उसे देखकर गर्व से भरें ही नहीं—कुछ क्षण ठहरकर अपने भीतर भी देखें। कहीं कोई डर तो नहीं जिसे साहस चाहिए? कहीं कोई पूर्वाग्रह तो नहीं जिसे बदलना चाहिए? कहीं कोई जिम्मेदारी तो नहीं जिससे हम बच रहे हैं? क्योंकि तिरंगा तभी सचमुच ऊँचा होता है,जब उसे थामने वाले हाथों से अधिक ऊँची उनकी नीयत होती है और शायद यही हमारा दायित्व है।

-भिवाड़ी राजस्थान

आजादी का संग्राम

रानी सिंगला

आजादी के संग्राम में
शहीद वीरों की गूँज ,
चिंगारी आजादी की
सुलगी मेरे जशन में है
इंकलाब की ज्वालाएं
लिपटी मेरे बदन में है।

मौत जहां जन्नत हो
ये बात मेरे वतन में है
कुर्बानी का जज्बा
जिंदा मेरे कफन में हो,
मत डराओ हमें अंधेरों से
हम चिरागों की बात करते हैं,
तुम हुकूमत की बात करते हो,
हम अपने हक की बात करते हैं।

जो झुका दे सर ज़ुल्म के आगे,
वो और होंगे ज़माने में,
हम तो लहू से अपने इतिहास में,
इंकलाब की बात करते हैं।

अदालतें तुम्हारी हैं, गवाह भी तुम्हारे हैं
तो क्या हुआ, हम खुली आँखों
से इंसाफ के, हर एक ख्वाब की
बात करते हैं।

काट दी ज़ुबान तो उँगलियों से लिख देंगे
दास्ताँ अपनी, हम खामोश रहकर भी,
हर ज़ुल्म के हिसाब की बात करते हैं।

गिरा दो तख्त, उछाल दो ताज,
मगर ये याद रखना तुम,
हम गुलामी की जंजीरों को
तोड़ कर भारत माता को
आज़ाद करने की बात करते हैं ,
पूरे देश में आजादी के
सुलगते हुए सैलाब की
बात करते हैं।

–लुधियाना

रति चौबे

स्वाधीनता और हम

१५ अगस्त १९४७ की वो सुबह सिर्फ कैलेंडर की तारीख नहीं थी। वो सदियों की गुलामी के बाद पहली सांस थी। वो खून, वो कुर्बानी, वो जेल, वो लाठियाँ... सबका हिसाब था,स्वतंत्रता की हवा कितना मन को शांति व तन को सहला रही थी इसका वर्णन करना नामुमकिन था बस महसूस कर रहे थे।

स्वाधीनता का मतलब सिर्फ अंग्रेजों का जाना नहीं था। स्वाधीनता का मतलब था - अपने फैसले खुद लेना। अपनी भाषा में बोलना। अपने खेत पर अपना हक। अपने बच्चों को बिना डर के स्कूल भेजना। स्वाधीनता का हम पर बहुत गहरा प्रभाव पडा..हम उसी दिन तो अचेतनावस्था से चेतन हुये थे। हमारी सोच पर प्रभाव पडा,तब गुलामी में हम हुकुम मानते थे। आजादी में हम सवाल पूछते हैं।

आज एक किसान भी सरकार से पूछ सकता है, एक छात्र भी नीति पर बहस कर सकता है। यही तो स्वाधीनता है। हम अपने को अब पहली बार पहिचानें,गुलामी में तो हम अपने को ही विस्मृत कर बैठे थे,हम अपने से ही पूछते थे कि हम आखीर है कौन...?

आज हम गर्व से कहते हैं मै सिर्फ भारतीय हूँ। मै भारत में रहता हूं, हमारी वेशभूषा, हमारा खाना, हमारी विविधता - ये सब आजाद देश की पहचान है। वरना ये सब अंग्रेजी कानून के नीचे दब गया होता। जिम्मेदारियों पर प्रभाव पड़ा और आजादी मिली तो अधिकार भी मिले और कर्तव्य भी अपने जाने। वोट देना, टैक्स देना, कानून को मानना, देश को आगे ले जाना - ये सब अब किसी अंग्रेज की जिम्मेदारी नहीं, हमारी जिम्मेदारी है।

स्वाधीनता एक बार मिली हुई चीज नहीं है। हर रोज इसे कमाना पड़ता है। भ्रष्टाचार से भी लड़ना पडता, शिक्षा ले एकता से रहना ही हमारी सभ्यता कहलाती है। लाखों शहीदों के लहू से लिखी गई है ये आजादी है, इसे सस्ते में मत बेचो, ये बडी कीमती अनमोल है ,गंवाना नहीं जंजीरें टूटीं तो हाथ खुले, पर आँखें भी खुलीं, और खुली ही रहे- अब गुलाम नहीं, हम निर्माता हैं इस देश के। प्रेमचंद की कलम और भगत सिंह की बंदूक, दोनों ने एक ही बात कही थी - सर उठाकर स्वाधीनता मतलब सिर्फ तिरंगा लहराना नहीं, स्वाधीनता मतलब भूखे को रोटी और प्यासे को पानी भी है।

आने वाली नस्लें पूछेंगी हमसे, तुमने आजादी के लिए क्या किया? इस सवाल का जवाब हमारे ही काम होगे,बस कर्मशील बनो। स्वाधीनता हमें विरासत में मिली है, पर इसे संजोना हमारी जिम्मेदारी है। अगर हम बंटेंगे तो आजादी कमजोर होगी। अगर हम पढ़ेंगे तो आजादी मजबूत होगी। इसलिए हर १५ अगस्त को सिर्फ झंडा मत फहराओ, अपने अंदर का स्व भी फहराओ- तभी हम भारत को सहेज कर रख पावेगे.. भारत है तो हम है .....

सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है जोर कितना बाजू-ए-कातिल में है

- नागपुर

मुक्त करोगे कब

अंजु श्रीवास्तव

दिल धड़क गया आहट पाकर ,
मन घबराया कुछ सकुचाई
हिम्मत करके इनकार किया,
अपनी ताकत का प्रहार किया।
भागी दौड़ी भी इधर उधर,
सांसे रोकी पीछे छिपकर
पर हार गई ,वह हार गई
सुन कर उसकी चीत्कार विकट।
आकाश धरा भी कांप गई
सिसकी के अंदर की सिसकी
अंतर्मन की उस पीड़ा को
शायद ही किसी ने सुनी होगी
तब सारी सृष्टि रोई होगी
कोसा होगा, खीझी होगी।
सिसके और पूछे विधना से वह
तूने कैसा जहां बना डाला
तुझको समझा सबसे आला
तेरी क्या ऐसी मजबूरी
क्यों मानवता से इतनी दूरी ?
हे औघड़दानी शिवशंकर
मेरी चीत्कार सुनोगे कब
तांडव नर्तन करोगे कब
कामांध दरिंदे नर पशुओं का
इन दुष्टों का संहार करोगे कब ?
आजादी के बधिक राक्षसों से
इस धरा को मुक्त करोगे कब?

मासिक ‘निर्दलीय’ के आगामी अंक

विगत दो दशकों से नियमित प्रकाशित निर्दलीय प्रकाशन की बहुरंगी अंतर्राष्ट्रीय मासिक पत्रिका ‘निर्दलीय’ प्रति माह विशेषांक के रूप मे प्रकाशित हो रही है। नई दिल्ली स्थित सलाहकार श्री सुरेश खांडवेकर एवं श्रीमती कविता मल्होत्रा और संरक्षक सेठ रामनिवास गुप्ता एवं श्री रमेश सिंह राघव के सहयोग से मासिक पत्रिका की साज-साज्जा और सामग्री में निरंतर उत्कृष्टता एवं विकास परिलक्षित है।

इस तारतम्य में आगामी वर्ष २०२६-२७ के लिए संपादकीय मंडल ने बारह विषयों का चयन किया है। आप सभी से प्रार्थना है कि आप इन विषयों पर अपने आलेख, खट्टे मीठे अनुभव, काव्य, कथा-कहानी,कविता, प्रहसन,संस्मरण अदि मासिक पत्रिका में प्रकाशनार्थ भेज सकते हैं। आपसे निवेदन है निम्नलिखित विषयों पर प्रकाशित होने जा रहे निर्दलीय मासिक पत्रिका के विशेषांकों के लिए विषयांतर्गत सामग्री अवश्य भेजें। माहवार विषय इस प्रकार है-- सितंबर - किशोरों की दशा और दिशा (जेन जी आंदोलन), अक्टूबर - पुस्तकें ही जीवन, नवंबर- शिक्षा और साहित्य, दिसंबर - पर्यावरण एवं जलवायु संरक्षण, जनवरी- नया साल, नया सोच, फरवरी-आनंद। मार्च- लपटों में कविता, अप्रैल - फुर्सत, मई -सैर सपाटा, जून-मुखर अभिव्यक्ति, जुलाई- निर्दलीय के अंतरराष्ट्रीय वार्षिक सम्मान समारोह पर केंद्रित, अगस्त -लोकतंत्र और हम, माह सितंबर में प्रकाशित होने जा रहे विशेषांक हेतु - किशोरों की दशा और दिशा (जेन जी आंदोलन) विषय पर रचनाएं/आलेख ३० अगस्त २०२६ तक व्हाट्स ऐप/मेल पर मिल जाना चाहिए।

* कैलाश आदमी, संस्थापक संपादक
9424443401/ ८८३९७९७४४८
मेल nirdaliyadaily@gmail.com

निर्दलीय से जुड़ना अब आसान

निर्दलीय दैनिक / साप्ताहिक /मासिक (मुद्रित आकार)का शुल्क भेजना अब आसान हो गया है क्योंकि अब आप भारतीय स्टेट बैंक, मुख्य शाखा भोपाल के हमारे निर्दलीय के खाता क्रमांक- 30030303507(IFSC code- sbin0001308 के अलावा हमारे मोबाइल फोन 9424443401 से जुड़े फोन पे या गूगल पे से भी शुल्क /सहयोग राशि भेज सकते हैं। दैनिक,साप्ताहिक व मासिक मुद्रित के साथ ई-पेपर भी हैं। ई-पत्रिका या पेपर हेतु शुल्क भेजना ऐच्छिक है।

मासिक निर्दलीय वार्षिकः स्पीड पोस्ट रु. 2100/-

संरक्षक/सलाहकार पद प्रतिष्ठार्थ

वार्षिक - 5000/- तीन वर्ष 11000/-

संरक्षक/सलाहकार- रु. 20000/-

नोट- दैनिक निर्दलीय प्रति अंक दो रु. (वार्षिक स्पीड पोस्ट से 2100 रु), साप्ताहिक ‘निर्दलीय’ प्रति अंक पांच रु.(वार्षिक शुल्क 1100 रु) स्पीड पोस्ट से 2100 रु. । साप्ताहिक व मासिक निर्दलीय दोनों स्पीड पोस्ट से मंगवाना है तो कुल राशि 3200 रु. भेजें।

व्यवस्थापकीय पता -निर्दलीय प्रकाशन, एफ 116/7 शिवाजी नगर, भोपाल 462016

खाताधारक का नाम- निर्दलीय
Nirdaliya
बैंक-भारतीय स्टेट बैंक
शाखा- मुख्य शाखा, भोपाल
462003
खाता क्र. 30030303507
आईएफएससी कोड (कूट संकेत)
-एसबीआईएन 0001308
(sbin 0001308)

दैनिक निर्दलीय, साप्ताहिक निर्दलीय और मासिक निर्दलीय की वार्षिक ग्राहकी/संरक्षक/सलाहकार सहयोग राशि हेतु दूरभाष क्र. 9424443401/8839797448 पर phone pay/Google pay के जरिए जमा कर स्क्रीन प्रिंट भेजें।

-प्रबंधक

UPI ID: nirdaliyadaily@okhdfcbank

जे.के.स्टील फर्नीचर
भोपाल

जीवन मारण
स्वत्वाधिकारी संपर्क-9826422823

१. पेट्रोल पंप के सामने, चूना भट्टी, कोलार मुख्य मार्ग, २. सर्वधर्म कॉलोनी सी सेक्टर पुल समीप कोलार मुख्य मार्ग, ३. बरखेड़ी कलां मुख्य मार्ग, भोपाल

THE BEST MEDIA TO ENHANCE
YOUR FOOTWEAR BUSINESS
DELHI FOOTWEAR MARKET NEWS
ESTD. 1984
footbizz
Step into the Future of Footwear
SCAN THE QR CODE TO DOWNLOAD THE APP
For Apple
For Android
INDIA'S FIRST
B2B FOOTWEAR APP
THAT SOLVES EVERY
PROBLEM FACED BY
MANUFACTURERS
AND WHOLESALERS.
Combo Offer
@4000/-
DFMN + FOOTBIZZ
Get 1 Year Subscription
SOFT COPY
ALSO AVAILABLE
Book Your
Advertisement Today
& Promote Your Brand
in India & Abroad
DELHI FOOTWEAR MARKET NEWS
25, Central Market, Ashok Vihar, Phase-1, New Delhi -110052
Ph. : 011-47028361, Mob.: 9717730178, Email: dfmn22@gmail.com

निर्दलीय RNI/DELHI/2006/19211 हर अंक विशेषांक अगस्त २०२६

RAM NIWAS & SONS
SRD STEELS (P) LTD.

SETH RAM NIWAS GUPTA
Chairman

SANJEEV GUPTA
Director

RAJEEV GUPTA
Director

DEEPAK GUPTA
Director

skgc

SHRI KRISHAN GRIT CO.
SKGC MINERALS LTD.

BRANCHES

Delhi • Mumbai • Bhopal • Bhilai • Ludhiana • Faridabad • Ahmedabad
Ghaziabad • Roorkee • Bangalore • Indore • Jaipur • Kanpur (U.P.)

Dr. Sanjeev Gupta (The Winner of)

- Global Business Icon Award - 2018
- Asia One-Global Indian of the Year 2018-19
- India's Greatest Brands 2018-19
- ARCH of Excellence Award
- Winner of National Award in 2021
- Meri Dilli Shresth Shree Sammaan - Nov. 2020
- ISI Mark from Bureau of Indian Standard - Dec. 2020
- Meri Dilli Shresth Shree Sammaan - Aug. 2022

स्वामी-मुद्रक-प्रकाशक-संपादक कैलाश श्रीवास्तव 'आदमी' द्वारा राघव भवन,गली क्र. 6/72 दयालपुर,दिल्ली 110090 से प्रकाशित,निर्दलीय प्रेस,भोपाल से मुद्रित।